thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 14 सितम्बर 2014 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 14 सितम्बर 2014 से 20 सितम्बर 2014

आ.कृ. षष्ठी ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 125, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी., सै.-14 फरीदाबाद में मनाया गया संस्कृत सप्ताह

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सैक्टर–14 फरीदाबाद में संस्कृत सप्ताह का आयोजन बड़े उत्साह के साथ किया। इसमें विद्यालय के प्राचार्य श्री सुरेन्द्र सिंह चौधरी के नेतृत्व में संस्कृत विभाग के सभी 5 शिक्षकों तथा 60 छात्र–छात्राओं ने भाग लिया।

विद्यालय की पूरी प्रार्थना सभा का आयोजन देवभाषा संस्कृत में किया गया। जिसमें वेद मन्त्रोच्चारण, नृत्य समाचार, आज का विचार, आज का विषय और अन्त में कक्षा दशमी की पाठ्य पुस्तक में वर्णित नाटक **"रमणीया हि सृष्टिरेषा"** का प्रस्तुतीकरण बहुत ही भव्य स्तर पर किया गया। विद्यालय के सभी शिक्षकों व छात्रों ने उसकी भूरि–भूरि प्रशंसा की।

पश्चात् इसके निबन्धलेखन, कविता रचना श्लोक गायन अन्ताक्षरी और लघु भाषणम् नाम से प्रतियोगिताएँ आयोजित की गईं। इन प्रतियोगिताओं में 45 बच्चों ने भाग लिया।

इस विद्यालय के छात्र निकुंज मंगला कक्षा दशमी (ए) को केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद की ओर से संस्कृत एप्स प्रतियोगिता में अखिल भारतीय स्तर पर द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। भारत सरकार की शिक्षामंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी ने निकुंज को स्वर्णपदक, प्रमाण पत्र तथा 3100/– रुपए नकद पुरस्कार देकर सम्मानित किया। इससे विद्यालय का गौरव बढ़ा।

नरेन्द्र देव डी.ए.वी. कुमारगंज में पौधारोपण कार्यक्रम संपन्न

नरेन्द्र देव डी.ए.वी. सीनियर सेकण्डरी पब्लिक स्कूल कुमारगंज, फैजाबाद (उ.प्र.) पौधारोपण कार्यक्रम संपन्न हुआ। कार्यक्रम का उद्घाटन स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया शाखा पिठला के प्रबन्धक श्री आशीष त्रिपाठी जी ने किया। श्री त्रिपाठी ने बताया कि पौधे हमारे जीवन साथी हैं। यदि पौधों को रोपित नहीं किया जाएगा तो जन–जीवन खतरे में पड़ जाएगा।

कार्यक्रम की अध्यक्षता कृषि विश्वविद्यालय के वित्त नियंत्रक श्री सुरेश चन्द उपाध्याय ने की। श्री उपाध्याय ने पेड़–पौधों के महत्व की विस्तार से चर्चा की। विद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. ओ.पी. मिश्र ने अपने उद्बोधन में कहा कि ग्लोबल वार्मिंग से निजात पाने का मात्र एक उपाय है अधिक पौधारोपण द्वारा धरती हो हरा–भरा रखना। माननीय प्रधानाचार्य के आह्वान पर सभा में उपस्थित समस्त लोगों एवं विद्यार्थियों ने हाथ उठाकर तन–मन से पेड़–पौधों के उचित देखभाल की प्रतिज्ञा की।

इस सत्र में आम, बेर, जामुन, ऑवला एवं वेल के पौधे लगाने का लक्ष्य रखा गया है। इस अवसर पर विद्यार्थियों के अतिरिक्त अजक गणमान्य अतिथि भी उपस्थित रहे।

डी.ए.वी. हमीरपुर में लगा वैदिक चेतना शिविर

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल हमीरपुर हिमाचल प्रदेश में वैदिक चेतना शिविर हर्षोल्लास से सम्पन्न हुआ। इस शिविर में नादौन, कांगू, आलमपुर तथा घुमारवीं स्थित विद्यालयों के छात्रों ने भी सक्रिय रुप से भाग लिया। शिविर का मूलभूत उद्देश्य ईश्वर भक्ति का भाव उत्पन्न करना, माता–पिता, गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता, धार्मिक ग्रन्थों के स्वाध्याय की रुचि जागृत करना, वैदिक संस्कृति के प्रति आत्मीयता को बढ़ाना, परस्पर हेल–मेल से रहना आदि आचरणों से सामाजिकता की भावना को बद्धमूल करना था। शिविर का उद्घाटन नादौन आर्य समाज के प्रधान श्री सुरेन्द्र जी ने किया। स्वामी चन्द्रव्रतानन्द जी ने कहा कि शिविर के माध्यम से मानव निर्माण होगा। शिविर में श्री पंकज, श्री सतीश शुक्ला, श्री नरेन्द्र नन्दा, श्री पुरुषोत्तम शर्मा आदि विद्वानों ने वक्ता के रुप में अपने उद्बोधनों से शिविरार्थियों को लाभान्वित किया। आवासीय शिविर में विशुद्ध गुरुकुलीय पद्धति से संयुक्त दिनचर्या, खानपान, रहन–सहन आदि था। शिविर में वैदिक यज्ञ, भजनोपदेश, योग–प्राणायाम, स्वदेशी खेल आदि विशिष्ट कार्यक्रमों का आयोजन निर्बाध गति से चला। समापन समारोह में शिविरार्थियों ने महर्षि दयानन्द और महात्मा हंसराज के पदचिन्हों पर चलते हुए यह प्रतिज्ञा की कि हम आजीवन मद्यपान, धूम्रपान, मांस भक्षण कदापि नहीं करेंगे। शिविर के सूत्रधार प्राचार्य श्री पी.सी. वर्मा जी ने आवासीय वैदिक चेतना शिविर की अध्यक्षता की व अपने प्रेरक उद्बोधन से शिविरार्थियों को कर्त्तव्यबोध से अवगत कराया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 14 सितम्बर, 2014 से 20 सितम्बर, 2014

सर्वाङ्ग-सुन्दर बनें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

सं वर्चसा पयसा सं तनूभिः, अगन्महि मनसा सं शिवेन।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायो, अनु मार्ष्टु तन्वो यद् विलिष्टम्।।

यजु. २.२४

ऋषिः **वामदेवः**। देवता **त्वष्टा**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● [हम] (**वर्चसा**) ब्रह्मवर्चस से [और], (**पयसा**) दूध से, माधुर्य से, (**सम् अगन्महि**) संयुक्त हों, (**तनूभिः**) शरीरों से, (**सम्**) संयुक्त हों, (**शिवेन मनसा**) शिव मन से, (**सम्**) संयुक्त हों।, (**सुदत्रः**) शुभ दानी, (**त्वष्टा**) जगद्–रचयिता परमेश्वर, (**रायः**) [धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि] ऐश्वर्यों को, (**वि–दधातु**) प्रदान करे, [और], (**यत्**) जो, (**तन्वः**) शरीर का, (**विलिष्टं**) त्रुटिपूर्ण अंग है, उसे, (**अनु मार्ष्टु**) परिमार्जित करे।

● हम चाहते हैं कि हम संसार में सर्वांग–सुन्दर बनकर रहें, षोडशकल चन्द्र के समान परिपूर्ण बनकर निवास करें। हमारे अन्दर ब्रह्मवर्चस हो, आत्मिक तेज हो, जिसके सम्बन्ध में कभी ऋषि विश्वामित्र ने कहा था कि ब्रह्म–तेज ही सच्चा बल है, अन्य बल उसके सम्मुख निःसार है। वह ब्रह्म–तेज का ही बल है, जिसके द्वारा शरीर से दुर्बल होते हुए भी अनेक मानव कोटि–कोटि जनों को अपने चरणों में झुकाते रहे हैं। साथ ही हमें 'पयः' भी प्राप्त हो। 'पयस्' शब्द दूध का वाचक होता हुआ भी रस, माधुर्य, शान्ति, निर्मलता, निश्छलता, सात्त्विकता आदि का भी द्योतक है। हमें पीने के लिए गो–रस और हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हमारे अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय रूपवाले पंच शरीरों का समुचित विकास हो। हमारा मन भी शिव हो, क्योंकि जब तक मन अशिवसंकल्पों से युक्त रहेगा, तब तक हमें किसी भी क्षेत्र में उत्कर्ष प्राप्त होना सम्भव नहीं है। मन को साधकर ही मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है, और मन की जीत पर ही उसकी जीत निर्भर है, मन के हारने पर उसका हारना अवश्यम्भावी है।

'त्वष्टा' परमेश्वर सारे जगत् का तरखान है, शिल्पी है, जिसका हस्त–कौशल सम्पूर्ण विश्व में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहा है। वह **'सुदत्र'** है, निरंतर सबको शुभ वस्तुओं का दान करता रहता है। वह हमें भी शुभ ऐश्वर्यों का–धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि का दान करे। वह हमें भौतिक एवं आध्यात्मिक समस्त शुभ सम्पत्तियों का अधीश्वर बनादे। हमारे शरीर का कोई अंग यदि सदोष या त्रुटिपूर्ण हो गया है, तो वह कुशल शिल्पी उसे परिमार्जित, सुसंस्कृत एवं परिशुद्ध कर दे। यदि हमारे नेत्रों की दृष्टि–शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि–शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि–शक्ति तीव्र होते हुए भी हम उसका उपयोग अभय दृश्यों को देखने में करते हैं, तो त्वष्टा प्रभु हमारी मन्द या अपवित्र नेत्र–शक्ति को शुद्ध कर दें। इसी प्रकार श्रोत्र, मुख, नासिका आदि अन्य अंगों को भी मांजकर तीव्र–शक्तिमय एवं पवित्र कर दे। हे कलाकार त्वष्टा प्रभु! तुम हमारी तूलिका से रंग भरकर हमें सर्वांग–सुन्दर, सर्व–गुण–सम्पन्न और सर्व–शक्ति–समन्वित कर दो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

दो रास्ते

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में स्वामीजी बता रहे थे कि महर्षि दयानन्द इस बात को देखकर निराश हुए कि इस देश में लोगों के विचार न तो एक हैं, न ठीक हैं। इस देश में पार्टियों की बाढ़ आ गयी है। ऐसा क्यों हो रहा है, इसलिए कि विचार एक नहीं। स्वामीजी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' का उल्लेख करते हुए कहा कि विचार एक न हों, उद्देश्य एक न हों, लक्ष्य एक न हों, तो देश में क्या होता है। उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' में स्वामी दयानन्दजी के शब्दों को दोहराया कि परमेश्वर कृपा करे कि इस रोग से हम आर्य लोगों को मुक्ति मिल जाए। स्वामीजी ने आगे कहा कि आर्यसमाजियों ने भी इन शब्दों के संदेश को नहीं अपनाया और फूट का शिकार हो गये। फूट का कारण है 'स्वार्थ'। यह भावना कि सब कुछ मैं हूँ। यह इच्छा कि सब कुछ मेरे हाथों में रहे। स्वामीजी ने इसे सर्वनाश का रास्ता बताया और कहा कि महर्षि का नाम लेते हो तो उनकी बात भी सुनो, उसे अपने जीवन में अपनाओ।

कथा के मुख्य विषय पर आते हुए स्वामीजी ने कहा कि अग्नि का एक गुण है कि वह गंदगी को जला देती है, हर वस्तु को शुद्ध कर देती है, और साथ ही वस्तु के परमाणुओं को बदलकर हज़ारों, लाखों, करोड़ों मीलों में फैला देना है। उन्होंने कहा कि तुम भी ऐसा करो। जो गुण तुमने प्राप्त किया उसे हर तरफ फैला दो। सूर्य की बात करते हुए कहा कि दूसरे के अवगुण नहीं गुण देखो। उसमें जो अच्छाई है उसे ग्रहण करो। बुराई को छोड़ दो। जलालपुर जत्तां का एक प्रसंग सुनाते हुए स्वामीजी ने कहा कि जोंक न बनो, बछड़ा बनो। हर समय बुराई देखना, तर्क–वितर्क करना, विरोध ही करते जाना, अच्छा स्वभाव नहीं। यह सज्जनों की बात नहीं, दुर्जनों की बात है। अपने आपको देखो, अपनी बुराई को दूर करो। अपने विचारों को अच्छा करो। गंदे, खोटे, छोटे विचारों को पास न आने दो। विचार की शक्ति ही सबसे प्रबल शक्ति है, इसलिए वेद में बार–बार कहा गया है कि 'मेरा यह मन शिव संकल्प वाला, अच्छे विचारों वाला हो।' अच्छे विचारों वाला तब होगा जब मैं अच्छे विचारों को इकट्ठा करूँ। दूसरों के अवगुण नहीं, उनके गुणों को देखूँ।

अब आगे....

पाँचवाँ दिन

(लम्बे–ऊँचे स्वर में देर तक एक ही बार ओ३म् का गुंजित उच्चारण करने के बाद पूज्य स्वामी जी महाराज ने अपनी कथा शुरू की–)

मेरी प्यारी माताओ और सज्जनो!

पिछले चार दिनों में सामवेद के इक्यानवे मन्त्र में आए शब्दों की बात मैं आपको सुना सका। अभी तीन शब्दों की बात और सुनानी है; बहुत महत्त्वपूर्ण शब्द हैं ये, जिनसे पता चलता है कि आदमी 'श्रेय–मार्ग' पर चलता हुआ 'प्रेय मार्ग' के आनन्द को कैसे प्राप्त कर सकता है। पहला शब्द था 'सोम', दूसरा 'राजा', तीसरा 'वरुण', चौथा 'अग्नि' पाँचवाँ 'आदित्य'। इससे आगे तीन शब्द हैं– 'विष्णु', 'ब्रह्मा' और 'बृहस्पति'। सबके सम्बन्ध में वेद कहता है कि इनके अनुसार चलें तो 'श्रेय मार्ग' पर चलने की प्रेरणा मिलेगी। 'श्रेय मार्ग' पर चलते हुए भी 'प्रेय मार्ग' का सुख मिलेगा।

'सोम' का अर्थ मैंने बताया यह कि–अपने जीवन में सरलता, नम्रता, मधुरता लाओ, मीठी वाणी बोलो, दूसरों के साथ पवित्र व्यवहार करो, घृणा तथा कुरूपता को नहीं, सुन्दरता और प्यार को लेकर आगे बढ़ो।

'राजा' के सम्बन्ध में मैंने बताया यह कि– अपने–आपको नियम में बाँधो, शरीर को ठीक रखने के लिए आयुर्वेद के बताए नियमों का पालन करो। महात्मा 'पुनर्वसु' कितनी ही बीमारियों की कितनी ही दवाएँ बता चुके तो उनसे पूछा गया–"महाराज! दवाएँ तो आपने बता दीं, रोग भी बता दिए, परन्तु यह भी बताइए कि रोग होते क्या हैं?"

महात्मा 'पुनर्वसु' ने कहा–

प्रज्ञापराधमूलं सर्वरोगाणाम्।

सुनो भाई! 'सब रोगों का मूल कारण, बुद्धि का बिगड़ जाना है।' जिह्वा ने देखे गोलगप्पे, खूब खट्टी मिर्चोंवाली चाट। उसने कहा– 'चाट खाऊँगी।'

बुद्धि ने कहा– "नहीं, गला खराब हो जाएगा। यह अच्छी चीज़ नहीं, छोड़ दो इसे।"

परन्तु यदि बुद्धि खराब है तो वह कहेगी–"अच्छा भाई, खाओ फिर।" तो होगा क्या? गला भी खराब होगा, पेट भी बुखार भी, चढ़ेगा। यह बुद्धि के खराब होने से रोग हुआ या नहीं? शरीर को अच्छा रखना है तो आयुर्वेद शास्त्र ने जो विधान और नियम बनाए हैं उनपर आचरण करो। आयुर्वेद के कानून और नियमों पर चलो तो शरीर सुखी रहेगा।

'योगदर्शन' ने जो नियम और विधान बनाए, उनपर आचरण करो तो मन, बुद्धि,

thearyasamaj.org

और चित्त ठीक मार्ग पर चलेंगे आगे बढ़ेंगे, ऊपर उठेंगे। और वेद ने जो विधान और नियम बताए, उनपर आचरण करो तो आत्मा की उन्नति होगी। तो अपने–आप को क़ानून–कायदों में बाँधो, मेरे भाई। इस बात को समझो कि मनुष्य–जीवन का ध्येय क्या है।

प्रतिदिन प्रातः उठो, नहा–धोकर सन्ध्या करो, हवन करो, योगाभ्यास करो, ध्यान लगाओ, जाप करो, कुछ तो करो भाई! महर्षि दयानन्द ने कहा, "हर मनुष्य के लिए प्रतिदिन यज्ञ करना आवश्यक है" और हम स्वामी दयानन्द की जय के नारे तो लगाते हैं, जो कुछ उन्होंने कहा, उसपर आचरण करना आवश्यक नहीं समझते।

अब यह आपकी आर्यसमाज है न। इसमें कितने ही ऐसे सभासद् हैं जो पचास वर्ष से ऊपर की आयु के हर मनुष्य को वानप्रस्थी बनना चाहिए। इसके बाद संन्यासी बनना चाहिए। कहा था या नहीं? तब बनते क्यों नहीं? नाम दयानन्द का लेते हैं, उसकी बात मानते नहीं। यह दूसरों को, अपने–आप को और महर्षि को धोखा देना नहीं तो क्या है? याद रखो। परिवार के मोह में, कारोबार के मोह में ईश्वर को भुलाकर घरों में एड़ियाँ रगड़ते मर जाओगे क्योंकि, महर्षि की बात पर आचरण करो या न करो, मौत आएगी अवश्य। आचरण करोगे तो उस ध्येय को प्राप्त करके जाओगे जिसके लिए यह मानव–शरीर मिला। न करोगे तो भी जाओगे अवश्य, परन्तु उस ध्येय को प्राप्त किए बग़ैर, पतन की राह पर आगे बढ़ते हुए। तुम 'दयानन्द की जय' के नारे लगाना चाहो तो लगाओ, कोई रोकता नहीं। परन्तु यह भी याद रखो कि तुम्हारा अपना कल्याण इन नारों से नहीं, बल्कि दयानन्द के बताए मार्ग पर चलने से होगा, उनके बताए विधान एवं नियमों पर आचरण करने से होगा।

तब 'वरूण' के सम्बन्ध में मैंने कहा। वरूण कहते हैं 'श्रेष्ठ' को और 'श्रेष्ठ' कहते हैं उनको जो पर तन्त्र नहीं। वरुण के अनुसार चलने का अर्थ याह कि परतन्त्रता के गढ़े से बाहर आओ। सबसे बड़ी गुलामी (पराधीनता) है इन्द्रियों की अधीनता। इस अधीनता से छुटकारा प्राप्त करो।

तब 'अग्नि' का वर्णन करते हुए मैंने कहा, अग्नि के अनुसार चलने का अर्थ यह है कि निरन्तर आगे बढ़ो, आग के शोलों की तरह ऊपर उठो, ऊपर–ही–ऊपर बढ़ते जाओ–

उद्यानं ते पुरूष नावयानम्।

'स्वयं को उठाओ। मैंने तुझे ऊपर के लिए, उन्नति करने के लिए बनाया है, नीचे गिरने के लिए नहीं।'

और फिर 'आदित्य' के सम्बन्ध में मैंने कहा–जिस प्रकार आदित्य या सूर्य गन्दी जगह से भी सुन्दर, साफ, स्वच्छ, जल ले लेता है, वैसे ही तुम भी हर जगह से गुण प्राप्त करो, खूबियाँ प्राप्त करो, अच्छाई को हासिल करो; अवगुण को, खराबी को, बुराई को नहीं। और हम क्या करते हैं? हर जगह अवगुण को देखते हैं, हर जगह खराबी को, हर समय उसी के चर्चे, हर समय दूसरों की निन्दा, हर समय टीका–टिप्पणी–यह सर–कार क्या है जी? कुछ भी नहीं, बेड़ा गरक़ कर दिया है इसने। अमुक पार्टी क्या है? फ़लाँ आदमी क्या है? अमुक स्त्री क्या है? सब बुरे हैं, सब घृणा योग्य, सब निन्दा योग्य। अरे सज्जन लोगो! यह भी तो देखो कि कहीं कुछ अच्छा भी है या नहीं? इसकी बात करो, इसको ग्रहण करो। परन्तु इन लोगों के लिए तो कुछ भी कुछ नहीं।

इन पाँच शब्दों की बात सुनाई मैंने आपको। इनसे अलग शब्द है 'विष्णु'।

विष्णु का अर्थ है, सर्वव्यापक। अब हम विष्णु–जैसे कैसे बनें जी? आत्मा तो सीमित है। शरीर में बैठा हुआ आत्मा तो और भी सीमित है, यह तो सर्वव्यापक हो नहीं सकता। तब विष्णु के अनुसार चलने का अर्थ क्या है? यह कि अपने दिल के अन्दर विशालता पैदा करो, संकु–चितता को छोड़ दो। अपने लिए नहीं, सबके लिए सोचो, सबके कल्याण के लिए काम करो। केवल करोलबाग के लिए नहीं, केवल दिल्ली के लिए नहीं, केवल पंजाब, केवल हरयाणा, केवल उत्तर प्रदेश, केवल बंगाल, केवल मद्रास या केवल गुजरात आदि के लिए नहीं, केवल भारत के लिए नहीं, बल्कि सारे संसार के लिए सोचो, सारे संसार के भले के लिए आगे बढ़ो। यह वह ध्येय था जिसके लिए महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज को जन्म दिया। और आप क्या कर रहे हैं?

अरे! क्यों आर्यसमाज को कुएँ का मेंढक बनाने का यत्न कर रहे हो? क्यों इसे साम्प्रदायिकता का गढ़ बना रहे हो? क्यों दयानन्द के आर्यसमाज को इस उद्देश्य के लिए प्रयोग कर रहे हो, जो दयानन्द ने कभी सोचा भी न था? विष्णु बनो! वेद कहता है– छोड़ दो तंग–दिल्ली को, साम्प्रदायिकता को, भाषा और प्रान्तपरस्ती को! अपने दिलों में विशालता पैदा करो! तुम्हें सारे संसार का उपकार करना है, तुम्हें विष्णु बनना है।

परन्तु विष्णु बनने के लिए कुछ साधना भी करनी पड़ती है। मैं पिछली सर्दियों में दक्षिणी अमेरिका के देश 'सूरीनाम' में गया। आज से एक सौ वर्ष पहले 35 या 40 हजार भारतीय वहाँ मजदूर बनकर पहुँचे थे। अधिकतर ये लोग उत्तर प्रदेश के थे। आज सौ वर्ष के बाद वे बहुत सुखी हैं। हिन्दी को भी उन्होंने कायाम रखा है। मैं दिल्ली से चला तो कई नगर मेरे नीचे से गुजर गए, फिर कई देश गुज़र गए, पहाड़, नदियाँ, झीलें, रंगिस्तान, एशिया गुज़र गया, यूरोप गुज़र गया, अतलान्तक महासागर भी, उत्तरी अमेरिका भी, मध्य अमेरिका भी, दक्षिणी अमेरिका में 'सूरीनाम' की राजधानी पेरी मेरी बो' में पहुँचा। हवाई जहाज़ से उतरकर देखा तो सब स्त्रियों ने साड़ियाँ पहल रखी हैं। पुरुषों ने पगड़ियाँ पहन रखी हैं। कई लोगों ने लाँगवाली धोतियाँ बाँध रखी हैं। कई सज्जनों के माथे पर लम्बे–लम्बे तिलक भी हैं। हवाई अड्डे से बाहर निकला तो लोगों की बहुत भीड़ जमा थी। उन्होंने हार पहनाए, स्वागत किया। मैंने उन्हें देखते हुए आश्चर्य से कहा–"अरे भाई! मैं भारत से चला तो कई देश पार कर आया, कई सागर, परन्तु प्रतीत होता है कि मैं भूल से फिर भारत पहुँच गया हूँ। प्रतीत होता है कि इतने दिनों का सफ़र व्यर्थ हो गया, मैं भारत से चलकर भारत में ही आ गया हूँ।"

वे बोले–"हाँ स्वामी जी! आप भारत में ही आए है। यह छोटा भारत है। भारत से हज़ारों मील दूर आकर भी हमने अपने देश को भुलाया नहीं।"

बहुत सुखी हैं सूरीनाम के लोग। उनमें इंजीनियर हैं, डॉक्टर हैं, ज़मीदार हैं, व्यापारी हैं, सभी प्रकार के लोग हैं, सब समृद्ध हैं। आर्य– समाज का काम भी वहाँ खूब होता है। आर्यसमाज न होता तो 35–40 हज़ार भारतीय सौ वर्ष पहले वहाँ पहुँचे तो सब–के–सब ईसाई हो गए होते। गुरू–शुरू में बने भी, कोई 25 हज़ार भारतीय ईसाई हो गए। तब आर्यसमाज ने कार्य आरम्भ किया। इन सब लोगों को फिर से आर्य बना दिया। आर्यसमाज के अतिरिक्त वहाँ सनातन धर्म सभा भी है, वह खूब काम करती है। मैं सूरीनाम गया था आर्यसमाज के निमन्त्रण पर, परन्तु वहाँ पहुँचा तो सनातन धर्म सभावाले भी आ गए; बोले – "हमारे विष्णु मन्दिर में भी चालो, वहाँ भी भाषण दो।" मैने कहा– "अच्छी बात है, अवश्य चलूँगा।"

और वहाँ गया मैं। बहुत बड़ा और सुन्दर मन्दिर है वह। एक बहुत बड़ा हॉल है। उसमें विष्णु की एक बहुत बड़ी संगमरमर की बनी मूर्ति रखी है। यह मूर्ति जयपुर से मँगवाई गई थी। जयपुर तो देवताओं को घड़ने के लिए प्रसिद्ध है। सब देवता वहीं घड़े जाते हैं। मूर्ति बनाने में कमाल करते हैं जयपुर के कारीगर। उनके पास एक कील होती है, एक हथौड़ी, दोनों की सहायता से वे पत्थर को ऐसे–ऐसे रूप देते हैं कि देखनेवाला चकित रह जाता है। सूरीनाम के उस विष्णु–मन्दिर की विशाल मूर्ति भी इन्हीं कलाकारों की कला का चमत्कार है। मैं इस मूर्ति के सामने खड़ा होकर भाषण देने लगा तो बोला–"आज मैं विष्णु के सम्बन्ध में ही बोलूँगा" और विष्णु के सम्बन्ध में ही सारा भाषण दिया।

विष्णु की मूर्ति के चार हाथ बनाते हैं– एक में शंख, दूसरे में चक्र, तीसरे में गदा, चौथे में पद्म।

विष्णु बनना है, उसके मार्ग पर चलना है तो इन चार चीज़ों को समझना और अपनाना होगा।

शंख का अर्थ है ऊँची आवाज। यह लाउड स्पीकर, यह रेडियो, ट्रांज़िस्टर, टैलीविजन, बड़े रेडियो स्टेशन, आकाश में भेजे गए हवाई ब्रॉडकास्टिंग स्टेशन– ये सब–के–सब शंख हैं। इनकी आवाज़ ऊँची होती है, दूर तक पहुँचती है। जो कुछ हम सुनाना या दिखाना चाहें, उसे दूर–दूर बैठे हुए हज़ारों–लाखों लोग सुनते या देखते हैं। एक ही समय में लाखों–करोड़ों लोगों तक हमारा सन्देश पहुँचता है, हमारे विचार पहुँचते हैं–यह है उस शंख का अर्थ।

जिस जाति या देश का यह शंख जितनी ऊँची आवाज़वाला होगा, उसका संदेश, उसके विचार, उसकी बात उतने ही ज़्यादा लोग सुनेंगे। भारत को देखो, पाकिस्तान को, रूस को, चीन को, जापान को, अमेरिका को, बरतानिया को, किसी भी देश को देखो–सब अपने शंख को अधिक–से–अधिक तेज़ करना चाहते हैं। सबके ब्रॉडकास्टिंग स्टेशन गर्ज–गर्जकर एक–दूसरे से ज्यादा ऊँची आवाज़ पैदा करने में लगे हैं, ज़्यादा लोगों को अपना सन्देश सुनाते हैं। याद रखो, कोई भी देश, कोई भी जाति, कोई भी समाज प्रचार और प्रसार के बिना आगे नहीं बढ़ सकता। लोग कहते हैं कि आज का युग प्रचार का युग है। परन्तु सचाई यह है कि इस दुनिया में हर युग प्रचार का युग रहा है। शंख के बिना तो भगवान् विष्णु का काम भी नहीं चला।

आर्यसमाज में कमज़ोरी आई तो क्यों? इसलिए कि आर्यसमाज ने प्रचार की ओर उतना ध्यान देना बन्द कर दिया जितना कि पहले दिया जाता था। एक समय था जब आर्यसमाज में कितने ही संन्यासी थे। मुझे याद है, मैं अभी बालक ही था। अपने पिताजी के साथ गुरूकुल–कांगड़ी के उत्सव पर गया तो सारा मंच आर्य संन्यासियों से भरा था। दो वर्ष पहले मैं वहाँ गया तो स्टेज पर केवल दो टूटे हुए संन्यासी बैठे थे, एक मैं और दूसरे स्वामी समर्पणानन्द।

अरे। जिस संस्था में प्रचार करने वाले ही नहीं रहेंगे, उसके विचारों का प्रचार होगा कैसे? यदि तुम चाहते हो कि आर्यसमाज की शक्ति बढ़े तो सबसे पहले इस शंख–शक्ति को बढ़ाओ। सारे भारत में आर्य उपदेशक बनाने के लिए कोई विद्यालय नहीं। सारे देश में ऐसा कोई

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

अच्छी शिक्षा से बालक अच्छे विचार के होते हैं

● हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरूषोवेदः।। यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है। वस्तुतः जब तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य हो तभी मनुष्य ज्ञानवान होता है। वह कुल धन्य वह सन्तान– बड़ी भाग्यवान, जिनके माता और पिता धार्मिक विद्वान हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है उतना किसी से नहीं।

ऋषि दयानन्द ने (स.प्र. द्वितीय– समु.) में लिखा है कि– बालक को माता–पिता सदा उत्तम शिक्षा करें जिससे सन्तान सभ्य हों और किसी अंग से कुचेष्टा न करने पाए...। जब वह कुछ–कुछ बोलने और समझने लगें तब सुन्दर वाणी और बड़े–छोटे, मान्य, पिता–माता, राजा, विद्वान आदि से भाषण सुनने और उनके पास बैठने आदि की भी शिक्षा करें, जिससे उनका कहीं अयोग्य व्यवहार न होके सर्वत्र प्रतिष्ठा हुआ करे।

यह सत्य है माता–पिता और आचार्य यही तीन अपने बालक–बालिका को उत्तम संस्कार दे सकते हैं। इन्हीं तीन पूज्य लोगों से शिक्षा, विद्या और बुद्धि जो बालक–बालिका को प्राप्त होती है, उनसे वे युवावस्था में भी कभी अनुचित कर्म नहीं करते हैं। कुसंगति में भी बुरे कर्म के लिए उनकी आत्मा गवाही नहीं देती। बचपन में जो माता से शिक्षा प्राप्त होती है वह टीका के समान होती है जिनसे वह कुकर्म रूपी रोगों से बचा रहता है।

आज भारत में धार्मिक अध्यापकों की बहुत कमी हो गई है। पाठशालाओं में केवल भौतिक शिक्षा की प्रधानता है। माता–पिता आचार्य के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिए कुछ भी नहीं बताया जाता। कैसी शिक्षा से चरित्र का निर्माण हो सकता है इस सम्बन्ध में भी विद्यार्थियों को कुछ भी ज्ञान नहीं कराया जाता। यदि शिक्षा के क्षेत्र में 'रामायण, गीता और कुछ उपनिषदों के श्लोक उनके पाठय पुस्तकों में प्रस्तुत किए जाए तो इससे भी बहुत सुधार हो सकता है। अतः वैदिक शिक्षा के अभाव में बालक–बालिका शिक्षा दीक्षा से पाश्चात्य सभ्यता को अपनाने लगे हैं। वेद कहता है कि:–

'उतिष्ठ स्वध्वरावा नो देव्या धिया/दृशेच मासावृहता सुशक्त निराग्ने याहि सुशस्तिभिः।
(यजु.11,41)

विद्वान् लोगों को चाहिए कि शुद्ध विद्या और बुद्धि के दान से सब मनुष्यों की निरन्तर रक्षा करें क्योंकि अच्छी शिक्षा के बिना मनुष्यों के सुख के लिए और कोई भी आश्रय नहीं है। इसलिए सबको उचित है कि आलस्य और कपट आदि कुकर्मों को छोड़ के विद्या के प्रचार के लिए सदा प्रयत्न किया करे।

अतः स्पष्ट है कि सभी उन्नतियों का केन्द्र शिक्षा है। शिक्षा दो प्रकार की होती है– 'भौतिक और आध्यात्मिक/ वर्तमान शिक्षा केवल भौतिक होने से, भूत से उत्पन्न– पदार्थों का ही ज्ञान कराया जाता है पर आध्यात्मिक ज्ञान जिसे वेदादिशास्त्रों में सत्य–अहिंसा, अस्तेय– चोरी करना, न्याय पूर्वक भोग, योगाभ्यास, सबसे मैत्रीभाव, अक्रोध, नैतिक आदर्श और नारी सम्मान का आदेश है इन सब उपदेशों से वंचित रखा जाता है। तात्पर्य यह कि जो परस्पर सबको शान्ति का दर्शन कराता है और अधर्म तथा अनैतिक कार्यों से पृथक रखता है ऐसी उत्तम शिक्षा को आधुनिक शिक्षा में सम्मिलित नहीं किया गया है। जिनका परिणाम यह हुआ कि मनुष्य शिक्षित होकर भी भौतिक भोग के कर्म में इतना लिप्त है कि उसे जीवन का उद्देश्य क्या है? कुछ पता नहीं।

आज कहने की कोई आवश्यकता नहीं विदेशी सभ्यता एवं चल चित्रों आदि द्वारा जो नंगापन दिखाया जा रहा है उससे उसका प्रभाव विशेषकर नवयुवक, युवतियों के ऊपर पड़ रहा है जिसका परिणाम– बलात्कार, अपराध और भ्रष्टाचार जैसे दुष्कर्म देश में बढ़ते ही जा रहे हैं। उनसे एवं उनकी सन्तति से उत्तम शिक्षा के न होने से देश की बिगड़ती हुई सामाजिक एवं राजनैतिक सुव्यवस्था में कभी सुधार नहीं हो सकता। जिस की माँग केवल अर्थ और विलासिता है।

आज विज्ञान के आविष्कार जहाँ एक तरफ तरक्की कर रहे हैं वहाँ– दूसरी तरफ मानव एवं चरित्र के निर्माण में समाज बहुत पीछे रह गया है। आज सभी लोग धन के आगे धर्म को भूल गए हैं। जहाँ दोनों को साथ लेकर चलना चाहिए था वहाँ केवल भौतिक भोग में फँसता जा रहा है।

यहाँ धर्म का अर्थ केवल मूर्ति पूजा, मन्नत करना और घंटा–घड़ियाल बजाना नहीं है बल्कि वैदिक शास्त्रों में इस प्रकार है धृतिक्षमा– दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः। धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्" अर्थात्– धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धीः (बुद्धि) विद्या, सत्य और अक्रोध इन दशो का नाम धर्म है। क्षमा का अर्थ अपराधी को क्षमा करना नहीं है। क्षमा का अर्थ जाति भेदभाव को भूलकर उनका सहायक बनना है। (रोग और अर्थ से असमर्थ मानव की सेवा भी एक धर्म है।) और सत्य से शरीर पवित्र नहीं होता, जल से होता है। जैसे जल से शरीर पवित्र होता है वैसे ही सत्याचरण से मन पवित्र होता है। और जो जैसा उसे–वैसा देखना विद्या है। मूर्ति को मूर्त्त रूप में देखना विद्या है, और उससे विपरीत उसे भगवान मानना अविद्या है। क्योंकि सर्वव्यापक ईश्वर की कोई मूर्त्ति नहीं बन सकती। वेद ने भी कहा है– 'न तस्य प्रतिमाऽस्ति यस्य नाम–महद्यशः"

चरित्र– जिस व्यक्ति में नैतिकता, सदाचारिता, मैत्रीभाव और प्रियवाणी है, वह चरित्रवान है। अर्थात् धन के नष्ट हो जाने पर मनुष्य का कुछ भी नहीं बिगड़ता, स्वास्थ्य खराब हो जाने पर कुछ बिगता है, लेकिन यदि चरित्र भ्रष्ट हो गया तो समझ लो सब कुछ नष्ट हो गया। धन फिर कमाया जा सकता है, स्वास्थ्य फिर सम्पादन किया जा सकता है, लेकिन भ्रष्ट हुआ चरित्र फिर कलंक रहित नहीं बनाया जा सकता। इसलिए मिस्टर हावे ने कहा है– चरित्र एक शक्ति है, प्रभाव है। वह मित्र उत्पन्न करता है, सहायक और संरक्षण प्राप्त कराता है और धन, मन तथा सुख का निश्चित मार्ग खोल देता है।'

शिक्षा विषय– आजकल स्कूल एवं कॉलेजों के छात्र–छात्राएँ, राजनीति करने लगे हैं। कोई किसी दल का समर्थक है तो कोई किसी दल का, परिणाम उन लोगों में एकता नहीं रहती और जहाँ एकत्व भाव नहीं होता वहाँ शान्ति कैसे हो सकती है।

आज से 70 वर्ष पहले विद्यार्थी लोग राजनीति नहीं करते थे। उस समय शिक्षा दीक्षा बहुत अच्छी होती थी। अध्यापक से विद्यार्थी लोग डरते थे, उनका मान सम्मान भी करते थे। उस समय स्कूल के लड़को के लिए कोई प्राइवेट मास्टर नहीं होता था। सारे पुस्तकों के विषय स्कूलों में ही पढ़ायें जाते थे। पर आजकल वैसा नहीं है, यदि छात्र लोग घर में प्राइवेट मास्टर के यहाँ न पढ़ें तो परीक्षा में पास न हो सकें।

सरकार की तरफ से मास्टरों को काफी वेतन मिलता है, पर स्कूल एवं कॉलेजों में कैसी शिक्षा दी जा रही है। जिसके कारण उन्हें अलग से प्राइवेट मास्टर के यहाँ पढ़ना पड़ता है। इस सम्बन्ध में कोई निरीक्षण नहीं करता।

आज से 70 वर्ष पहले विद्यार्थी लोग राजनीति नहीं करते थे। उस समय शिक्षा दीक्षा बहुत अच्छी होती थी। अध्यापक से विद्यार्थी लोग डरते थे, उनका मान सम्मान भी करते थे। उस समय स्कूल के लड़को के लिए कोई प्राइवेट मास्टर नहीं होता था। सारे पुस्तकों के विषय स्कूलों में ही पढ़ायें जाते थे। पर आजकल वैसा नहीं है, यदि छात्र लोग घर में प्राइवेट मास्टर के यहाँ न पढ़ें तो परीक्षा में पास न हो सकें।

मु. पो. मुरारई
जिला वीरभूम (प. बंगाल) 731219, मो. 8158078011

☞ पृष्ठ 03 का शेष

दो रास्ते

आश्रम नहीं जहाँ आर्य उपदेशक और आर्य संन्यासी पहुँचे और उन्हें दो–चार वर्ष के लिए खाना, कपड़ा और रहने की जगह आदि मिल जाय। आर्यसमाज–मन्दिर अवश्य हैं, उनमें कोई संन्यासी पहुँच जाय तो सबसे पहला प्रश्न होता है– क्यों जी। कथा करते हो?

यदि वह उपदेशक या संन्यासी कथा कर सकता है तो एक–दो दिन के लिए खाना मिल जाता है, नहीं तो कुछ भी नहीं। यदि कोई आर्य साधु, संन्यासी, ब्रह्मचारी या वानप्रस्थी वेद का स्वाध्याय करने के लिए, कोई ग्रन्थ या लेखमाला लिखने के लिए कहीं आराम से बैठकर काम करना चाहे तो उसके लिए आर्यसमाज के पास कोई जगह नहीं। ऐसी दशा में आर्यसमाज कमज़ोर नहीं होगा तो और क्या होगा?

शेष अगले अंक में....

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

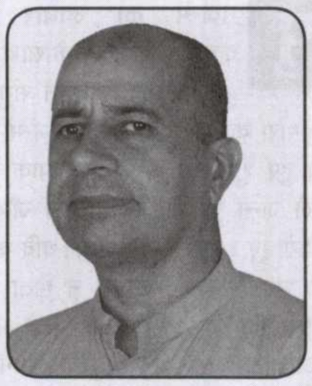

शंका – शुभ कर्म निष्काम भावना से किस प्रकार किए जाते हैं? किराने का व्यापारी अपनी दुकानदारी निष्काम–भावना से किस प्रकार कर सकता है?

समाधान – जो कर्म 'भौतिक–सुख' की प्राप्ति के लिए किए जाते हैं, वे 'सकाम–कर्म' होते हैं। और जो कर्म 'मोक्ष–सुख' की प्राप्ति के लिए किए जाते हैं, वे 'निष्काम–कर्म' होते हैं।

सवाल है कि किराने का व्यापारी अपनी दुकान पर जो सामान बेचता है, वो धन कमाने के लिए बेचता है, या मोक्ष प्राप्ति के लिए बेचता है? निःसंदेह धन प्राप्ति के लिए। तो उसका यह सकाम–कर्म हुआ।

सकाम कर्म 'कंडीशनल कर्म' है। मतलब, इतना रूपया दोगे, तो माल देंगे, इतना रेट नहीं दोगे, तो माल नहीं देंगे। आप इतनी फीस दोगे तो पढ़ाएँगे, नहीं दोगे तो नहीं पढ़ाएँगे, यह सकाम–कर्म है। हमारा उद्देश्य धन कमाना है, फीस लेना है। इस तरह अगर ट्यूशन फीस लेते हैं, तो वो सकाम–कर्म है।

अगर फ्री में पढ़ाते हैं, तो निष्काम–कर्म है। हम क्यों फ्री में पढ़ा रहे हैं, क्योंकि हमको मोक्ष चाहिए, धन की चिंता नहीं है। जीने के लिए भगवान दो रोटी देता है, यही बहुत है। अब तक जीवन जी लिया, आगे भी जी लेंगे। भगवान खूब दे रहा है, आगे भी दे देगा। धन के लिए काम नहीं करना है। **अगर मोक्ष की प्राप्ति के लिए काम कर रहे हैं तो यह 'निष्काम–कर्म' है।**

इसलिए व्यापारी आदि जो लोग हैं, वे तो सकाम–कर्म ही कर पाएँगे, निष्काम–कर्म तो नहीं कर पाएँगे। ऐसा तो नहीं कर पाएँगे कि सामान रखा है, जिसको लेना है, ले जाओ। जितना धन रखना है, रख जाओ। ऐसे तो दुकान नहीं चल पाएगी।

व्यापार आदि में निष्काम–कर्म करना कठिन है। हाँ, विद्या पढ़ाने में निष्काम–कर्म हो सकता है। विद्या पढ़ाने में कोई हिम्मत वाला ऐसा हो कि कहे – "अच्छा भई, आओ बैठो, पढ़ाएँगे। जिसको कुछ देना हो, तो दे देना, नहीं देना हो, तो मत देना, कोई कंडीशन नहीं है, कोई फीस नहीं है।" उसमें तो चल सकता है।

अगली बात–व्यापारी ने पैसे कमा लिए सौ रूपए। उसमें से तीस–चालीस रूपए खा–पी लिए, खर्च कर लिए, तीस–चालीस रूपए भविष्य के लिए जमा कर दिए। अब दस–बीस रूपए बच गए, इन्हें वह दान दे दे। इस प्रकार दिया गया दान भी निष्काम–कर्म हो सकता है।

पूछा है कि गृहस्थ व्यक्ति निष्काम–कर्म कैसे करे? वो इस तरह से कर सकता है। **कमाने के बाद जो पैसा दान में देगा, वो सकाम और निष्काम दोनों हो सकता है।** यदि वो विद्यालय के लिए दान देते समय कहता है – "साहब! मेरे नाम का पत्थर लगाओ। यहाँ लिखो कि मैंने सवा लाख रूपए दान दिए।" तो वह सकाम–कर्म हो जाएगा। और अगर वह कहता है–" मेरा नाम नहीं लेना, बताना भी नहीं, बोलना भी नहीं, लिखना भी नहीं, कुछ नहीं, चुपचाप गुप्तदान"। तो वह निष्काम–कर्म हो जाएगा।

एक मजे की बात बताऊँ – एक व्यक्ति की दोनों तरह की स्थिति थी। मतलब कुछ सकाम, कुछ निष्काम। गुरुजी ने उपदेश दिया – "भई निष्काम–कर्म करो, मोक्ष में जाएँगे।" यह सुनकर उसने सौ रूपए दान दिए और पर्ची लिखवा दी, गुप्तदान। एनाउंसमेंट होने लगी। माइक पर आवाज आई, सौ रूपए गुप्तदान। जिसने सौ रूपए दिए थे, वो पीछे बैठा था। उसने अपने पड़ोसी से कहा – "तुम्हें पता है, यह सौ रूपए गुप्तदान किसका है? यह मेरा गुप्तदान है। इस तरह वो बताना भी चाहता है और गुप्त भी रखना चाहता है। ये बात मिश्रित (मिक्सड) है, न तो पूरी तरह सकाम और न ही निष्काम।

निष्काम–कर्म का अर्थ यह बिल्कुल भी नहीं है कि, 'जिस कर्म को करने के पीछे कुछ भी कामना न हो।' कुछ न कुछ कामना तो मन में रहेगी ही। दरअसल, दुनिया में सर्वथा–निष्काम कोई भी नहीं हो सकता। मतलब, ऐसा कोई कर्म हो ही नहीं सकता, और कोई व्यक्ति ऐसा कर्म कर ही नहीं सकता कि जिस कर्म के पीछे मन में कोई भी कामना न हो। वस्तुतः कोई न कोई कामना तो जरूर होगी। **व्यक्ति को दो में से एक तो चाहिए, या तो मोक्ष चाहिए, या संसार का सुख चाहिए।**

अगर कोई व्यक्ति यह चाहता है कि मैं कुछ भी कामना न करूँ। फिर तो वो काम ही नहीं करेगा। जब इच्छा ही नहीं है, तो काम क्यों करेंगे? सुबह बिस्तर पर पड़े रहेंगे, उठेंगे ही नहीं। व्यक्ति सुबह उठता है, फिर नहाता–धोता है, रोजमर्रा के सारे काम करता है, फिर देश की सेवा करता है, धर्म करता है, प्रचार करता है, व्यापार करता है, लेन–देन करता है। इच्छा चाहे भौतिक–सुख की हो, चाहे मोक्ष–सुख की हो, लेकिन कोई न कोई इच्छा मन में जरूर होगी।

महर्षि मनु जी कहते हैं कि – **यह 'आँख झपकना' भी बिना इच्छा के संभव नहीं है।** इतना सामान्य सा कार्य है, जब यह भी बिना इच्छा के नहीं होता, तब अन्य कार्यों, दान देना, व्यापार करना आदि कर्मों) में पूर्ण–निष्कामता (इच्छाहीनता) कैसे संभव है?

यदि केवल मोक्ष की इच्छा से आपने अच्छे कर्म किए हैं तो वे ही 'निष्काम कर्म' श्रेणी में आएँगे। मोक्ष वाले कर्म न तो बुरे होते हैं और न मिश्रित। वे तो केवल शुद्ध ही होते हैं, शुभ कर्म ही होते हैं।

भौतिक सुख की इच्छा से, चाहे आपने अच्छे कर्म किए, चाहे बुरे किए, चाहे मिश्रित किएः, तीनों प्रकार के कर्म सकाम–कर्म कहलाएँगे। इस तरह सकाम कर्म तीन प्रकार के यानी अच्छे, बुरे और मिश्रित होते हैं।

महर्षि मनु जी कहते हैं कि – यह 'आँख झपकना' भी बिना इच्छा के संभव नहीं है। इतना सामान्य सा कार्य है, जब यह भी बिना इच्छा के नहीं होता, तब अन्य कार्यों, दान देना, व्यापार करना आदि कर्मों) में पूर्ण–निष्कामता (इच्छाहीनता) कैसे संभव है?

अतः टोटल चार तरह के कर्म हुए, एक तो निष्काम कर्म, जो शुद्ध, शुभ कर्म, अच्छे कर्म होते हैं और तीन प्रकार के सकाम कर्म, जो शुभ, अशुभ और मिश्रित होते हैं।

शंका – मोक्ष की इच्छा एक कामना है, 'मोक्ष की कामना' से किया हुआ निष्काम–कर्म सकाम हो सकता है?

समाधान – पूछना शायद ऐसा चाहते हैं कि मोक्ष की कामना भी तो एक कामना है? यदि मोक्ष की कामना से कर्म किया गया, तो फिर वह निष्काम–कर्म कैसे हुआ? कामना तो उसमें भी है। उत्तर है:–

महर्षि दयानंद जी ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में परिभाषा लिखी है कि – **"परमेश्वर प्राप्ति को लक्ष्य बनाकर जो कर्म किए जाते हैं, उसका नाम ही निष्काम कर्म है।"**

बिना कामना के तो कर्म हो ही नहीं सकता, वह असंभव है। व्यक्ति जो भी क्रिया करता है, वो कामनापूर्ण ही होती है। यह बात 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखी है। कामना तो जरूर है।

कामनाओं में अंतर है। अगर लौकिक–सुख की कामना से किया तो वह सकाम–कर्म है और मोक्ष सुख की कामना से कर्म किया तो निष्काम–कर्म है। ऐसा जानना चाहिए।

शंका–क्या कार्य में 'भावना' महत्त्वपूर्ण होती है, इससे 'फल' में अंतर आता है?

समाधान – जी हाँ। दो व्यक्ति आपको एक जैसी क्रिया करते हुए दिखाई देंगे, लेकिन दोनों को फल एक जैसा नहीं मिलेगा, फल अलग–अलग होगा। बाह्य–क्रिया एक जैसी होगी, पर फल में अंतर होगा क्योंकि उनकी भावना में अंतर है।

एक सैनिक ने शत्रु देश के सैनिक को मार डाला और एक नागरिक ने दूसरे नागरिक को मार डाला। हत्या दोनों ने की। बाह्य–क्रिया दोनों घटनाओं में एक जैसी है। लेकिन क्या फल दोनों को एक जैसा मिलेगा? नहीं, अलग–अलग मिलेगा। सैनिक को इनाम मिलेगा और नागरिक को दंड मिलेगा। दोनों में भावना का अंतर है। सैनिक की भावना है देश की रक्षा करना और नागरिक की भावना है – अपने स्वार्थ के लिए मारना।

कर्म का फल केवल आपकी क्रिया पर ही आधारित नहीं है। **क्रिया के साथ 'भावना' भी जुड़ती है, तब फल का निर्धारण होता है।**

बाह्य–क्रिया एक जैसी होने पर भी अगर भावना में अंतर है, तो फल में अंतर आ ही जाएगा। सकाम–भावना से करोगे तो भिन्न फल होगा और निष्काम–भावना से करोगे तो भिन्न फल होगा। अक्षरधाम में जो घटना हुई उसमें क्या हुआ? सैनिकों ने आतंकवादियों को मार डाला। शत्रुओं (आतंकवादियों) को मारना, यह देश की रक्षा का काम है। इसमें निःसंदेह सैनिकों को पुण्य मिलेगा। नियम है कि – बड़े से बड़ा काम भी अगर बुरे लक्ष्य के लिए किया जाए, तो संसार उसे कोई महत्त्व नहीं देता है।

दर्शनयोग महाविद्यालय
रोजड़वन, गुजरात

thearyasamaj.org

पुनर्जन्म (आवागमन)

● डा. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

पुनर्जन्म का आधार – कर्मफल सिद्धान्त के साथ ही पुनर्जन्म का सिद्धान्त संयुक्त है। हमारा वर्तमान जन्म पिछले जन्मों में किये हुए शुभाशुभ कर्मों का विपाक है। अगले जन्म का आधार वर्तमान जीवन में किये हुए शुभाशुभ कर्म होंगे। यदि कर्म और पुनर्जन्म का सिद्धान्त न होता तो हम इस लोक को अनियन्त्रित मानते और समझते कि यहाँ अन्यायपूर्वक मनमाने ढंग से लोगों को दण्ड तथा पुरस्कार प्राप्त होते हैं।

यदि हमारे वर्तमान जन्म का आधार पूर्वजन्म के शुभाशुभ कर्म का परिणाम नहीं है तो वर्तमान जन्म से पूर्व हमारा जीव कहाँ था और क्या कर रहा था? क्योंकि जीव शाश्वत अर्थात् नित्य है। जीव के कर्म भी प्रवाह रूप से नित्य हैं। कर्म और कर्मवान् का नित्य सम्बन्ध होता है। पुनर्जन्म न मानने पर वर्तमान जन्म से पूर्व या पश्चात् जीव का अस्तित्व तथा ईश्वर का जीव के कर्म के प्रति फलप्रदातृत्व असिद्ध हो जाएगा? स्वामी दयानन्द के अनुसार पुनर्जन्म न मानने पर वर्तमान जन्म से पूर्व या पश्चात् जीव का निकम्मापन तथा परमेश्वर का भी निकम्मापन सिद्ध होगा। जीव और ईश्वर दोनों नित्य और शाश्वत है अतः जीव का कर्म कर्तृत्व–(**स्वतंत्रः कर्ता** के आधार पर) तथा ईश्वर का फलप्रदातृत्व भी नित्य है।

कृतहानि एवं अकृताभ्यागम– "पूर्व तथा परजन्म न मानने पर 'कृतहानि' तथा 'अकृताभ्यागम' दोष होगा। अर्थात् जीव इस जन्म के शुभकर्म का फल पाने से वञ्चित रहेगा यह **कृतहानि** होगी। तथा इस जन्म में हमने जो उत्तम सुख आदि पाया है इस उत्तम सुखरूपी फल का कोई हेतु नहीं है। इसी प्रकार दुःख फल का भी कोई कारण नहीं है। अतः इस सुख तथा दुःखरूपी अभ्यागम (प्राप्ति) अकृत अर्थात् बिना कुछ किये प्राप्त हुआ है, यह मानना होगा। परन्तु 'कर्मफल सिद्धान्त' में 'कृतहानि' और 'अकृताभ्यागम' दोष नहीं होता।"

ईश्वर में वैषम्य एवं नैर्घृण्य दोष– इसी प्रकार पूर्वजन्म न मानने पर ईश्वर में वैषम्य तथा नैर्घृण्य दोष मानने पड़ेंगे जो ठीक नहीं है। क्योंकि यह विषम सृष्टि जीव–कर्म–सापेक्ष है। जो जीव जैसे कर्म करता है वैसे ही फल प्राप्त करता है। अतः ईश्वर वैषम्य तथा नैर्घृण्य दोषों से युक्त नहीं है।

इस जन्म में हमने जिस प्रकार दूसरे को सुख–दुःख, हानि–लाभ पहुँचाया है उसका उसी प्रकार अगले जन्म में बिना शरीर धारण किये हमें फल प्राप्त नहीं हो सकता।

पूर्वजन्म के पाप–पुण्य के बिना इस जन्म में सुख–दुःख की प्राप्ति मानने से ईश्वर अन्यायकारी हो जाएगा, तथा हमारे पूर्वजन्म के कर्म का नाश हो गया यह मानना पड़ेगा। दोनों ही मन्तव्य कथमपि उचित नहीं है। इस प्रकार पुनर्जन्म की सिद्धि में ऊपर दो प्रकार की युक्तियाँ दी गई हैं– (1) परमात्मा न्यायकारी है वह पूर्वजन्म के पाप–पुण्य के बिना सुख–दुःख नहीं दे सकता। (2) पूर्वजन्म के पाप–पुण्य के बिना उत्तम, मध्यम, अधम शरीर कभी नहीं मिल सकते। इस प्रकार इस जन्म के सुख–दुःख आदि को प्रत्यक्ष से अनुभव करके उसके कारण रूप में पूर्वजन्म के पाप–पुण्य का अनुमान किया जाता है।

अन्य दार्शनिक युक्तियाँ– अब हम भारतीय दर्शनकारों की कुछ अन्य युक्तियाँ उपस्थित करते हैं। जो उन्होंने पुनर्जन्म की सिद्धि में दी हैं। (3) योगसूत्र तथा व्यास–भाष्य में बतलाया गया है कि जातमात्र कृमि को भी मृत्यु का भय दिखलाई देता है। यदि पूर्वजन्म में मृत्यु का अनुभव न होता तो उसका संस्कार भी न होता। संस्कार के बिना स्मृति भी न होती और मृत्यु के स्मरण के बिना मृत्यु ये भय भी न लगता। अतः प्राणी मात्र को जो मृत्यु से भय होता है उससे पुनर्जन्म का अनुमान किया जाता है। (4) बालक को जन्म के समय जो हर्ष, शोक, भय आदि अनुभूतियाँ होती हैं, उसका कारण पूर्वजन्म है। बालक कभी के तर्कपुरस्सर विश्लेषण को हम अपने शब्दों में व्याख्यान करके प्रस्तुत कर रहे हैं–

प्रश्न– जब जीव को पूर्वजन्म के कर्मों का स्मरण नहीं है तब उन विस्मृत कर्मों का फल परमेश्वर क्यों देता है? इससे जीव का सुधार नहीं हो सकता। जीव को दिये जानेवाले दण्ड का कारण ज्ञात होना चाहिए।

उत्तर– ज्ञान के आठ प्रकार होते हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव इन आठ प्रमाणों द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है। पूर्वजन्म की सिद्धि 'अनुमान' प्रमाण से होती है। जिस प्रकार वैद्य अपने रोग का कारण (निदान) जान लेता है क्योंकि वह वैद्यकशास्त्र का ज्ञाता है। उसी प्रकार एक सामान्य व्यक्ति भी (अवैद्य) अपने ज्वर आदि रोग का कारण इतना तो जान ही लेता है कि मुझसे कुपथ्य हो गया है। इसी प्रकार मनुष्यों को भी अपने–अपने जीवन में समय–समय पर प्राप्त राज्य, धन, बुद्धि, विद्या, दारिद्रय, निर्बुद्धि, मूर्खता आदि सुख–दुःख को देखकर 'पूर्वजन्म' का अनुमान कर लेना चाहिए। इस जगत् या संसार में विचित्र प्रकार के सुख तथा दुःख की न्यूनता या अधिकता को देखकर पूर्वजन्म का अनुमान अवश्य करना चाहिए।

पूर्वजन्म के न मानने पर ईश्वर पक्षपाती हो जाएगा क्योंकि उसकी सृष्टि में कोई दारिद्रय आदि दुःख प्राप्त कर रहा है तो कोई राज्य आदि सुख प्राप्त कर रहा है। बिना पूर्व सञ्चित पाप–पुण्य के इस दारिद्रय तथा धनाढयता, बुद्धि–वैभव और निर्बुद्धिता का हेतु क्या है? पूर्वजन्म के अनुसार दुःख सुख देने से परमेश्वर न्यायकारी सिद्ध होता है। इसी आधार पर स्वामीजी ने पुनर्जन्म न मानेवाले ईसाई तथा इस्लाम मतों की कड़ी समालोचना की है।

ईसाई और इस्लाम– 'जब मुसलमान लोग पूर्वजन्म और पूर्वकृत पाप–पुण्य नहीं मानते तो किन्हीं पर निआमत अर्थात् फ़ज़ल या दया करने और किन्हीं पर न करने से खुदा पक्षपाती हो जाएगा। क्योंकि बिना पाप–पुण्य के सुख–दुःख देना केवल अन्याय की बात है। जब उनके पूर्वसंचित पुण्य–पाप ही नहीं, तो किसी पर दया और किसी पर क्रोध करना नहीं हो सकता।' आदम हव्वा और शैतान की कहानी बाईबिल तथा कुरआन दोनों में है तथा दोनों मतावलम्बी इस पर विश्वास करते है। स्वामीजी का प्रश्न है कि खुदा ने बिना अपराध के शैतान को पापी (अपराधी) क्यों बनाया, उक्त तीनों को खुदा ने शाप क्यों दिया? शैतान ने आदम या हव्वा को तो बहकाया नहीं अपितु सत्य बात कही। खुदा ने ही आदम और हव्वा को झूठ कहा कि इसके खाने से तुम मर जाओगे। और आदम के तथाकथित पापी होने से उसकी सन्तान पापी क्यों होगी?

प्रश्न– एक जन्म होने से भी परमात्मा न्यायकारी हो सकता है। सर्वोपरि राजा जो करे वही न्याय है। जिस प्रकार माली उपवन में छोटे–बड़े वृक्ष लगाता है। किसी को काटता–उखाड़ता और किसी की रक्षा करता या बढ़ाता है। अतः जिसकी जो वस्तु है, वह वस्तु उसकी मर्जी पर है। जैसा वह चाहे वैसा रखे। उसके (ईश्वर के) ऊपर दूसरा कोई न्याय करनेवाला नहीं है। जो उसको कोई दण्ड दे सके। अतः ईश्वर को किसी से डर नहीं है।

उत्तर– ईश्वर पूजनीय और सबसे बड़ा इसीलिए माना जाता है कि वह सबके प्रति पक्षपात रहित होकर न्याय करता है। जो न्याय विरूद्ध आचरण करे तो वह ईश्वर नहीं हो सकता। माली भी (युक्ति के बिना) मार्ग में या अस्थान में वृक्ष नहीं लगाता, न काटने योग्य वृक्ष को नहीं काटता। काटने योग्य वृक्ष को नहीं बढ़ाता। इसी प्रकार परमेश्वर भी युक्तिपूर्वक यथायोग्य न्याय करता है। बिना कारण के कार्य करने से ईश्वर दोषी हो जाएगा। अतः परमेश्वर के लिए न्याययुक्त कर्म ही करना आवश्यक है। क्योंकि वह स्वभाव से ही पवित्र और न्यायकारी है। उन्मत के समान कार्य करने और अन्याय करनेवाले व्यक्ति की संसार में प्रतिष्ठत करने से तथा धर्माचरण, अनिन्दित कार्य करनेवाले व्यक्ति को (निरपराध को) दण्डित करने से पुरस्कृत या दण्डित करनेवाला व्यक्ति या न्यायधीश समाज में अन्यायी माना जाता है। अतः ईश्वर न्याय करता है, अन्याय नहीं। तभी वह किसी से नहीं डरता। सोते–सोते हँसता है, कभी दुःख होता है, कभी डर जाता है, इस हर्ष आदि का कारण इस जन्म का अनुभव नहीं है। इस जन्म में बालक ने कोई अनुभव प्राप्त नहीं किया, अतः ये स्मृतियाँ पूर्वजन्मों के अभ्यास के कारण होती हैं। यह कहना ठीक नहीं होगा कि जैसे कमल आदि में विकास और संकोच होते हैं, ऐसे ही शिशु भी अकारण ही हँसता, रोता है। क्योंकि कमल आदि के विकास संकोच उष्णता के होने न होने पर निर्भर है, अतः उस संकोच, विकास के निमित्तत्व उष्णता है। इसी प्रकार हर्ष आदि भी बिना निमित्त के नहीं हो सकते। पूर्वजन्म के अभ्यास के अतिरिक्त और कोई निमित्त हर्ष आदि का नहीं है, इसलिए यहाँ पूर्वजन्म का अभ्यास ही निमित्त मानना पड़ेगा। उत्पन्न होते ही बालक को जो दूध पीने की इच्छा होती है, उसका कारण भी पूर्वजन्म का आहाराभ्यास ही है। क्योंकि इस जन्म में नवजात शिशु को अन्य कोई आहार प्राप्त नहीं हुआ इससे पूर्वजन्म का अनुमान होता है। यदि ऐसा कहा जाए कि जिस प्रकार चुम्बक लोहे की ओर खिंचता है, वैसे ही बच्चा भी दूध पीने की ओर आकृष्ट होता है, तो यहाँ भी लोहे का चुम्बक की ओर आकर्षण नैमित्तिक है, बिना निमित्त के लोहा चुम्बक की ओर नहीं खींचता। यदि बिना निमित्त के खिंचता है तो मिट्टी के ढेले की ओर क्यों नहीं खिंचता? अतः लोहे के चुम्बक की ओर खिंचने का निमित्त चुम्बक की आकर्षण शक्ति है। इसी प्रकार बालक की दुग्धपानेच्छा का निमित्त भी पूर्वजन्म का आहाराभ्यास है।

पूर्वजन्म को भूलने के कारण–

1. जीव अल्पज्ञ है, त्रिकालदर्शी नहीं इसलिए इसे पूर्वजन्म का स्मरण नहीं रहता।

2. जिस मन से जीव ज्ञान प्राप्त करता है, वह मन एक समय में दो ज्ञान प्राप्त नहीं

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

thearyasamaj.org

एक क्रान्तिकारी की जेल–डेयरी से– (2)

'जो उसने फाँसी लगने से केवल 48 घंटे पूर्व काल कोठरी में बैठ कर लिखी।

● **डॉ. सहदेव वर्मा**

गतांक से आगे:– (पिछले अंक में आप पढ़ चुके हैं कि लखनऊ के जेलर का बन्दियों के प्रति प्रेम पूर्ण व्यवहार था। यद्यपि क्रान्तिकारी को फाँसी की सजा सुनाई जा चुकी थी, इसलिये किसी प्रकार उसकी काल कोठरी की सीखचें नीचे से काटकर उन्हें बनावटी ढंग से जमा दिया गया था और बन्दी किसी भी समय उन सलाखों को हटाकर जेल से – फरार हो सकता था और एक रात जब वह भागने के इरादे से तेयार हो गया तो उक्त जेलर के व्यवहार को याद करके उसने अपना इरादा बदल दिया। नव–युवकों के लिए भी बन्दी ने ठोस संदेश दिया:–) अब आगे पढ़िये:–

आज 16 दिसम्बर 1927 ई. को निम्नलिखित पंक्तियों का उल्लेख कर रहा हूँ। जब कि 19 दिसम्बर 1927 ई. सोमवार को साढ़े छः बजे प्रातः काल शरीर फाँसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है। अतएव नियत समय पर इह लीला संवरण करनी ही होगी। यह सर्वशक्तिमान प्रभु की लीला हैं। सब कार्य उनकी इच्छानुसार ही होते हैं। यह परम पिता परमात्मा के नियमों का परिणाम है कि किस प्रकार किसको शरीर त्यागना होता है। मृत्यु के सकल उपक्रम निमित्तमात्र हैं। जब तक कर्म क्षय नहीं होता, आत्मा को जन्म–मरण के बन्धन में पड़ना ही होता है। यह शास्त्रों का निश्चय हैं। यद्यपि यह बात वह पर ब्रह्म ही जानता है, कि किन कर्मो के परिणामस्वरूप कौन सा शरीर इस आत्मा को ग्रहण करना होगा। किन्तु अपने लिये मेरा यह दृढ़ निश्चय हैं, कि **मैं उत्तम शरीर धारण कर नवीन शक्तियों सहित अति शीघ्र ही पुनः भारत वर्ष में ही किसी निकटवर्ती या इष्ट मित्र के गृह में जन्म ग्रहण करूँगा।** क्योंकि मेरा जन्म जन्मान्तर यही उद्देश्य रहेगा कि मनुष्य मात्र को सभी प्राकृतिक पदार्थों पर समानाधकार प्राप्त हों। कोई किसी पर हकूमत न करे। सारे संसार में जनतंत्र की स्थापना हो।

वर्तमान समय में भारत वर्ष की अवस्था बड़ी शोचनीय है। अतएव लगातार कई जन्म इसी देश में ग्रहण करने होंगे, और जब तक कि भारत वर्ष के नरनारी पूर्ण तया सर्वरूपेण स्वतंत्र न हो जाँय, परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना होगी, कि वह मुझे इसी देश में जन्म दें, ताकि मैं उसकी पवित्र वाणी– **'वेद वाणी'** का अनुपम घोष मनुष्य मात्र के कानों तक पहुँचाने में समर्थ हो सकूँ। संभव है कि मैं मार्ग निर्धारण में भूल करूँ, पर इसमें मेरा कोई विशेष दोष नहीं, क्योंकि मैं भी तो अल्पज्ञ जीव मात्र ही हूँ। भूल न करना केवल सर्वज्ञ से ही संभव है। हमें तो परिस्थितियों के अनुसार ही सब कार्य करने पड़े और करने होंगे। परमात्मा अगले जन्म में सुबुद्धि प्रदान करे ताकि मैं जिस मार्ग का अनुसरण करूँ, वह त्रुटि रहित ही हो।

........अब मैं उन बातों का भी उल्लेख कर देना उचित समझता हूँ, जो काकोरी षड्यन्त्र के अभियुक्तों के सम्बन्ध में सेशन जज के फैसला सुनाने के पश्चात् घटित हुई 16 अप्रैल 1927 ई. को सेशन जज ने फैसला सुनाया था। 18 जुलाई सन् 1927 को अवध चीफ कोर्ट में अपील हुई। इसमें कुछ की सजाएँ बढ़ी और एकाध की कम भी हुई। अपील होने की तारीख से पहले मैंने संयुक्त–प्रान्त (यू.पी.) के गवर्नर की सेवा में एक मैमोरियल भेजा था। जिसमें प्रतिज्ञा की थी की अब भविष्य में क्रान्तिकारी दल से कोई सम्बन्ध न सखूँगा। इस मैमोरियल का जिक्र मैंने अपनी अंतिम दया–प्रार्थना–पत्र में, जो मैंने चीफ कोर्ट के जजों को दिया था, कर दिया था, किन्तु चीफकोर्ट के जजों ने मेरी किसी प्रकार की प्रार्थना स्वीकार नहीं की। मैंने स्वयं ही जेल से अपने मुकदमे की बहस लिखकर भेजी, जो छापी गई। जब यह बहस चीफ़ कोर्ट के जजों ने सुनी, तो उन्हें बड़ा सन्देह हुआ कि बहस मेरी लिखी हुई न थी। इन सब बातों का नतीजा यह निकला कि चीफ कोर्ट अवध द्वारा मुझे महाभयंकर षड्यंत्रकारी की पदवी दी गई। मेरे पश्चात् पर जजों को विश्वास न हुआ और उन्होंने अपनी धारणा को इस प्रकार प्रकट किया कि यदि यह (रामप्रसाद) छूट गया तो फिर वही कार्य करेगा। बुद्धि की प्रखरता तथा समझ पर कुछ प्रकाश डालते हुए मुझे 'निर्दयी हत्यारे' के नाम से विभूषित किया गया।

लेखनी उनके (जजों के) हाथों में थी, जो चाहे सो लिखते, किन्तु काकोरी षड्यंत्र का चीफ कोर्ट का आद्योपान्त फैसला पढ़ने से भली भाँति विदित होता है, कि मुझे मृत्यु दण्ड किस ख्याल से दिया गया। यह निश्चिय किया गया कि रामप्रसाद ने सेशनजज के विरूद्ध अपशब्द कहे हैं? ख़ुफ़िया विभाग के कार्यकर्ताओं पर लांछन लगाए हैं, अर्थात् अभियोग के समय जो अन्याय होता था, उसके विरूद्ध आवाज़ उठाई। अतएव रामप्रसाद सबसे बड़ा गुस्ताख मुलजिम है। अब माफी चाहे वह किसी भी रूप में माँगे, नहीं दी जा सकती।

चीफ़कोर्ट से अपील खारिज हो जाने के बाद यथा नियम प्रान्तीय गवर्नर तथा फिर वाइस राय के पास दया–प्रार्थना की गई। रामप्रसाद 'बिस्मिल', राजेन्द्र लाहिड़ी, रोशन सिंह तथा अशफाक उल्ला खां के मृत्यु दण्ड को बदल कर अन्य दूसरी सजा देने की सिफारिश करते हुए संयुक्त प्रान्त (यू.पी.) की कौंसिल के लगभग सभी निर्वाचित हुए मेम्बरों ने हस्ताक्षर करके निवेदन–पत्र दिया। मेरे पिता ने ढाई सौ रईस, आनेरेरी मजिस्ट्रेट तथा जमीदारों के हस्ताक्षरों से एक अलग प्रार्थना–पत्र भेजा। किन्तु श्रीमान सर विलियम मैरिस की सरकार ने एक न सुनी। उसी समय लेजिस्लोटिव असेम्बली तथा कौंसिल–ऑफ–स्टेट के 78 सदस्यों ने हस्ताक्षर करके वाइसराय के पास प्रार्थना–पत्र भेजा कि। 'काकोरी षड्यंत्र के मृत्यु दण्ड पाये हुए को मृत्यु दण्ड की सजा बदल के दूसरी सजा कर दी जाय। क्योंकि दौरा जज ने सिफ़ारिश की है, कि यदि ये लोग पश्चाताप करें तो सरकार दण्ड कम कर दे। चारों अभियुक्तों ने पश्चाताप प्रकट कर दिया है।' किन्तु वाइसराय महोदय ने भी एक न सुनी।

इस विषय में मानवीय पं. मदन मोहन मालवीय जी ने तथा असेम्बली के कुछ अन्य सदस्यों ने वाइसराय से मिल कर भी प्रयत्न किया था, कि मृत्यु दण्ड न दिया जाय। इतना होने पर सबको आशा थी कि वाइसराय महोदय अवश्य मेव मृत्युदण्ड की आज्ञा रद्द कर देंगे। इसी हालत में चुपचाप विजयादशमी से दो दिन पहले जेलों को तार भेज दिये गये कि दया नहीं होगी। सबकी फाँसी की तारखी मुकर्रर (निश्चित) हो गई। जब मुझे सुपरिटैन्डेन्ट ने जेल में तार सुनाया तो मैंने भी कह दिया कि आप अपना काम कीजिये। किन्तु सुपरिन्टैन्डेन्ट जेलर के अधिक कहने पर कि एक तार दया–प्रार्थना का सम्राट के पास भेज दो। क्योंकि यह उन्होंने नियम सा बना रखा है कि प्रत्येक फाँसी के कैदी की ओर से जिसकी दया भिक्षा की अर्जी वाइसराय के यहाँ से खारिज हो जाती है, वह एक तार सम्राट के नाम से प्रान्तीय सरकार के पास अवश्य भेजते हैं। कोई दूसरा जेल सुपरिन्टैडेन्ट ऐसा नहीं करता। उपरोक्त तार लिखते समय मेरा कुछ विचार हुआ कि प्रीवी कौंसिल इंग्लैण्ड में अपील की जाय।

मैने श्री युत मोहन लाल सक्सेना वकील लखनऊ को सूचना दी। बाहर किसी को वाइसराय की अपील खारिज होने की बात पर विश्वास भी न हुआ। जैसे तैसे करके श्री युत मोहन लाल सक्सेना द्वारा प्रीवी कौंसिल में अपील कराई गई। नतीजा तो पहले से ही मालूम था। वहाँ से भी अपील खारिज हुई। यह जानते हुए कि अंग्रेज–सरकार कुछ भी न सुनेगी, मैंने सरकार को प्रतिज्ञा–पत्र क्यों लिखा? क्यों अपीलों पर अपीले तथा दया–प्रार्थनाएँ की? इस प्रकार के प्रश्न उठ सकते हैं। मेरी समझ में सदैव यही आया है कि राजनीति एक शतरंज के खेल के समान है। शतरंज के खेलने वाले भली भाँति जानते हैं कि आवश्यकता होने पर किस प्रकार अपने मोहरे मरवा देने पड़ते हैं।

बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के छोड़ने या उन पर खुली अदालत में मुकदमा चलाने के प्रस्ताव जब असेम्बली में पेश किये गये तो सरकार की ओर से बड़े जोरदार शब्दों में कहा गया कि सरकार के पास पूरा सबूत मौजूद है। अदालत में अभियोग चलाने से गवाहों पर आपत्ति आ सकती है। यदि आर्डिनेंस के कैदी लेख बद्ध प्रतिज्ञा–पत्र दाखिल कर दें कि वे भविष्य में क्रान्तिकारी आन्दोलन से कोई सम्बन्ध न रखेंगे तो सरकार उन्हें रिहाई देने के विषय में विचार कर सकती है।

बंगाल में दक्षिणेश्वर तथा शोभा–बाजार बम केस आर्डिनेन्स के बाद चले। खुफिया विभाग के सुपिरन्टैन्डेन्ट के कत्ल का मुकदमा भी खुली अदालत में हुआ, और भी कुछ हत्याओं के मुकदमे खुली अदालत में चलाये गये, किन्तु कोई एक भी दुर्घटना या हत्या की सूचना पुलिस न दे सकी।

काकोरी षड्यंत्र केस पूरे डेढ़ साल तक खुली अदालतों में चलता रहा। सबूत की ओर से लगभग तीन सौ गवाह पेश किये गये कई मुखबिर तथा इकबाली खुले तौर से घूमते रहे पर कहीं कोई दुर्घटना या किसी को धमकी देने की सूचना पुलिस ने नहीं दीं। सरकार की इन बातों की पोल खोलने की गरज से ही मैंने लेख बंधेज सरकार को दिया। सरकार के कथानुसार जिस प्रकार बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के सम्बन्ध में सरकार के पास पूरा सबूत था, और सरकार उनमें से अनेकों को भयंकर षड्यंत्रकारी दल का सदस्य तथा हत्याओं का जिम्मेदार समझती तथा कहती थी, तो इसी प्रकार काकोरी के षड्यंत्रकारियों के लेख बद्ध प्रतिज्ञा करने पर कोई गौर क्यों न किया? बात यह है कि 'जबरा मारे रोने न दे।' मुझे तो भली भाँति मालूम था कि संयुक्त प्रान्त में जितने राजनैतिक अभियोग चलाये जाते हैं उनके फैसले खुफिया पुलिस की इच्छानुसार लिखे जाते हैं। बरेली पुलिस कान्स्टेबिलों की हत्या के अभियोग में नितान्त निर्दोष नव–युवकों को फँसाया गया और सी. आई.डी. वालों ने अपने डायरी दिखलाकर फैसला लिखाया। काकोरी षड्यंत्र में भी अन्त में ऐसा ही हुआ। सरकार की सब

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

theaaryasamaj.org

उपासना के मायने

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

सरकारी सेवा से सेवानिवृत होने के उपरांत उस पद में निहित शक्तियों से विहीन होने के कारण बीमार पड़ गए अपने एक साथी को देखने गया। उनकी अर्धांगिनी ने बताया कि आजकल बीमारी की हालत में सारा दिन खाली होते हैं। सारा जीवन नास्तिक रहे लेकिन अब किसी गुरू के डेरे पर जाकर नाम धारण कर लिया है। सारा दिन माला लेकर नाम जपते उपासना करते हैं। यह बताते हुए उनकी पत्नी के चेहरे पर संतोष का एक भाव आया जिसे मैंने साफ पढ़ लिया।

परन्तु अब चिंतन करने की मेरी बारी थी। मैं सोचने लगा कि क्या अपने कष्ट की अवस्था में किसी नाम विशेष के जाप मात्र को ही उपासना कहते हैं। बीमार पड़े, व्यापार में घाटा हुआ, गृह क्लेश, पुत्र वियोग या अन्य कोई भी दुःख या कष्ट या फिर लाभ विशेष की आशा में किसी गुरु द्वारा दिया गया नाम या मंत्र और उसका गिनकर जाप करना या करवाना ही उपासना कहलाता है। कहीं ऐसी उपासना के नाम पर हम खुद को धोखा तो नहीं दे रहे या फिर ऐसा 'नाम' देने वाला 'गुरू' हमारा शोषण तो नहीं कर रहा।

बस इसी विचार को लेकर कुछ चिंतन किया जो पाठकों के समक्ष है। उपासना का शाब्दिक अर्थ है– निकट, समीप, नीचे, आसन। उपासना कौन किसकी करता है? हम मनुष्य, उपासक के रूप में अपने उपास्य देव, सृष्टि के रचयिता और हम मनुष्यों को प्रकृति का समस्त ऐश्वर्य बड़ी सुलभता के साथ उपयोग, उपभोग के लिए देने वाले सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी, सर्वान्तर्यामी, ऐश्वर्यशाली उपास्य देव ईश्वर की उपासना करते हैं। अब प्रश्न उठता है कि उपासना की सही विधि क्या है? एक उपासक कैसे उपने उपास्य ईश्वर की उपासना कर सकता।

उपासना के सामान्य अर्थ से इसकी विधि को समझने का प्रयास करते हैं। हम कैसे अपने ईश्वर के निकट पहुँचे ताकि वहाँ आसन लगाकर उपासना कर सकें इसके लिए आवश्यक है कि पहले हमें अपनी स्थिति, अपने उपास्य ईश्वर की स्थिति और उस मार्ग का ज्ञान होना चाहिए जिस पर चलकर एक उपासक अर्थात् हम अपने उपास्य देव ईश्वर तक पहुँच सकें। अब अगला प्रश्न उठता है कि हमारी स्थिति क्या है मैं कौन हूँ और कहां पर हूँ। मैं अक्सर कहता हूँ कि यह मेरा हाथ है, मेरी आँखें हैं, यह मेरा शरीर है अर्थात् मेरी यह भौतिक अवस्था मनुष्य का चोला, शरीर मेरा साधन है। मुझे यह साधन अर्थात् मनुष्य का शरीर परमपिता परमेश्वर न्यायकर्ता ने मेरे पूर्व जन्मों के कर्मो के आधार पर न्याय तुला पर तोलते हुए एक साधन के रूप मुझे प्रदान किया। अर्थात मैं इस साधन मनुष्य शरीर की प्राप्ति से पूर्व भी था और पश्चात भी रहूंगा। इस चिंतन से स्पष्ट हुआ कि मैं एक जीवात्मा हूं जो कि इस शरीर का शरीरी, देह का देही, रथ का रथी अर्थात इस मनुष्य शरीर रूपी साधन का अधिपति स्वामी एक साधक हूँ। मुझे यह साधन मेरे पूर्व के कर्मो के आधार पर न्यायकर्ता ईश्वर ने प्रदान किया है। मेरे इस साधन का उद्देश्य अपने उस साध्य अर्थात् ईश्वर को पा लेना है।

अपनी स्थिति को जानने के उपरांत अपने उपास्य ईश्वर की स्थिति को जान लेना आवश्यक है। यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के प्रथम मंत्र **"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्"** में ईश्वर का पता दिया गया है। आर्य समाज के दूसरे नियम में महर्षि दयानन्द ने ईश्वर को सर्वव्यापी और कण–कण में विद्यमान बतलाया। इससे यह स्पष्ट हुआ कि उपासक को अपने ईश्वर उपास्य की उपासना के लिए कहीं किसी गुरु विशेष के डेरे या तथाकथित तीर्थ पर भटकने की आवश्यकता नहीं है। योगेश्वर कृष्णा ने ईश्वर को सर्वव्यापी के साथ ही **"ईश्वरः सर्वभूतानां हृदयेशे तिष्ठति"** कहकर ईश्वर को अति सूक्ष्म रूप में हम सभी जीवात्माओं में विद्यमान भी बतलाया। महर्षि दयानन्द ने भी ईश्वर के स्वरूप का वर्णन करते हुए सर्वान्तर्यामी बतलाया। इससे तो यह स्पष्ट हो गया कि ईश्वर हमारे सबसे निकट आत्मा में ही विद्यमान है। ईश्वर से हमारी दूरी आँख से भौंह की दूरी से भी कम है। हमारे निकटस्थ यदि कोई है तो वह हमारा ईश्वर ही है।

ज़ब मैं और मेरा ईश्वर मेरे ही अन्दर एक साथ विद्यमान है फिर उपासना तो स्वतः हो गई। लेकिन यथार्थ इससे भिन्न है। यह ठीक है कि ईश्वर हमारे निकटस्थ है पर क्या हम खुद अपने निकटस्थ रहने वाले ईश्वर के पास हैं। हमारी स्थिति ठीक वैसी है जैसे बस में यात्रा करते हुए खिड़की से बाहर देखते निहारते हमें अपने सहयात्री की कोई खबर नहीं रहती। हम ईश्वर प्रदत्त प्रकृति के ऐश्वर्यों के भोग और दोहन में इतने निमग्न हो जाते हैं कि अपने निकटस्थ ईश्वर का आभास भी नहीं कर पाते और इतने कृतध्न हो जाते हैं कि इस समस्त ऐश्वर्य के प्रदाता का धन्यवाद भी नहीं करते। 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' अर्थात् त्यागपूर्वक भोग करने के स्थान पर हम तो भोगवाद में डूब जाते हैं। हमारी हालत मधु में डूबकर तड़पती मधुमक्खी सरीखी हो जाती है जो प्रकृति के ऐश्वर्य के भोग में फँसकर साधन आधीन हो जाते हैं। यह साधन आधीन होने की हालत पराधीन से भी बुरी है। साधन आधीन में तो हम चेतन होकर भी जड़ के आधीन रहते हैं। ईश्वर से हमारी दूरी न तो काल की है न ही स्थान की अपितु केवल हमारी अज्ञानता की है। यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के पांचवे मंत्र में कहा गया है **"तद्दूरे तद्वन्तिके"** अर्थात वह ईश्वर तो हमारे अत्यंत निकट है लेकिन अपनी अज्ञानता अबोधता के कारण हम उस ईश्वर से बहुत दूर हैं। वह ईश्वर तो हमारे पास है और हम उस ईश्वर को अपनी अज्ञानता अबोधता के कारण पूरा जीवन बाहर न जाने किस किस डेरे तीरथ पर ढूँढते, मारे–मारे फिर रहे हैं।

अतः उपासना के लिए आवश्यक है कि हम अज्ञानता को दूर करके अपने ईश्वर और अपनी स्थिति को समझें और अपने ईश्वर के निकट रहें। महर्षि दयानन्द उपासना को आर्योद्देश्यरत्नमाला में परिभाषित करते हुए लिखते हैं जब मनुष्य का आत्मा आनन्दस्वरूप परमात्मा के आनन्द में निमग्न होकर नर्तन करने लगे उसे उपासना कहते हैं। यहां आनन्द में नर्तन करने का अभिप्राय है कि हम ईश्वर की आज्ञा का यथावत पालन करें। इसके लिए प्रत्येक स्थिति में हम अपनी अन्तरात्मा से आने वाली प्रत्येक ईश्वरीय प्रेरणा का पालन करें।

मेरे मन में चल रहा, देवासुर संग्राम।
रहती बस यह कामना, जीतें सदा श्रीराम।।

यहाँ श्रीराम दैवीय भावनाओं की विजय का प्रतीक है कि प्रत्येक कार्य को करने के लिए उद्यत होने से पूर्व मन में उत्पन्न होने वाली संकल्प–विकल्प की स्थिति में सदैव दैवीय भावनायें आसुरी शक्तियों पर विजयी हो अर्थात् हम ईश्वरीय प्रेरणा अंतरात्मा की आवाज पर केवल निस्वार्थ भाव से परोपकार के कार्य किया करें और हमारे कार्य काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष की भावनाओं से प्रेरित न हों। जब हम जीवन के प्रत्येक कार्य में ईश्वरीय आज्ञा का पालन करेंगे तभी हम कह सकते हैं कि उपासना करते हुए उपासक और उपास्य देव निकट हो गए हैं।

602 जी एच 53 सै 20
पंचकुला
मो. 09467608686

☞ पृष्ठ 06 का शेष

पुनर्जन्म (आवागमन)

कर सकता– –**'युगपज्ज्ञानपत्तिर्मनसो लिंगम्'** (न्याय दर्शन 1। 1। 16) अर्थात्– जिससे एक काल में दो पदार्थों का ज्ञान ग्रहण नहीं होता, उसको मन कहते हैं।

3. (1) पूर्वजन्म की कौन कहे इसी जन्म में जब गर्भावस्था में जीव था उस समय की कोई बात स्मरण नहीं रहती।

(2) पाँच वर्ष की अवस्था से पूर्व की बातों का स्मरण नहीं रहता।

(3) जागृत या स्वप्नावस्था के बहुत से व्यवहार सुषुप्ति या गाढ़निद्रा में स्मृत नहीं रहते।

(4) यदि किसी से यह पूछ दिया जाए कि आज से 12 बारह वर्ष पूर्व 13वें वर्ष के 5 पाँचवें महीने के 9 नवें दिन 10 दस बजकर 1मिनट पर तुमने क्या किया था? उस समय तुम्हारा मुख, हाथ, कान, आँख शरीर किस ओर किस प्रकार था तो वह कुछ बता नहीं सकता।

(5) यदि कोई पूर्वजन्म की बातों का स्मरण करना चाहे तो भी नहीं जान सकता क्योंकि जीव का ज्ञान और स्वरूप अल्प है। यह बात ईश्वर के जानने योग्य है, जीव के नहीं।

(6) जीव का कल्याण इसी में है कि वह पूर्वजन्मों की बात नहीं जानता। इसी में जीव सुखी है। नहीं तो पूर्वजन्मों के दुःखों को देख–देख (सोच–सोचकर) दुःखित होकर मर जाता।

(7) योगभाष्य 3। 16 में यह मत व्यक्त किया गया है कि– "संस्कारों का साक्षात् करने से पूर्वजन्म का ज्ञान हो जाता है। संस्कार में संयम करने से संस्कार का साक्षात्कार होता है। यतः देश, काल तथा निमित्त के साक्षात्कार के बिना संस्कार का साक्षात् नहीं हो सकता। अतः संस्कार के साक्षात्कार द्वारा योगियों को पूर्वजन्म का ज्ञान उत्पन्न होता है।"

पूर्वजन्म–सिद्धान्त के लाभ–

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने पुनर्जन्म या पूर्वजन्म के सिद्धान्त के ऊपर होनेवाले अन्य आक्षेपों का समाधान तथा इस सिद्धान्त के लाभों को भी 'सत्यार्थप्रकाश' में विवृत किया है। स्वामीजी

प्रश्न– परमात्मा पहले ही विचार करके जिसको जितना सुख–दुःख देना होता है, दे देता है। इस संसार में बड़े–छोटे को एक–सा ही दुःख है। बड़ों को बड़ी चिन्ता तथा छोटों को छोटी। जैसे किसी साहूकार को लाख रूपये का मुकदमा हो और वह कचहरी जा रहा हो तो उसे बहुत चिन्ता

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

thearyasamaj.org

साप्ताहिक सत्संग में वैभव कुमार द्वारा दिया गया भाषण

रविवार के साप्ताहिक सत्संग में कक्षा नववीं स वैभव कुमार रॉय के द्वारा आर्यसमाज अनारकली मन्दिर में परिवार से सम्बन्धित व्याख्यात्मक प्रवचन।

ओ३म्

अनुव्रतः पितुः पुत्रः माता भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिदाम्।।

सुप्रभात आदरणीय आर्यसमाज के प्रधान जी, मंत्री जी, आगन्तुक सज्जनवृन्द, मेरे अध्यापकगण एवं मेरे साथियों आज आपके समक्ष एक ऐसे मंत्र पर विचार प्रस्तुत करने जा रहा हूँ जो परिवार को आगे बढ़ाने का प्रयास करता है।

सधारणतः संसार में सभी लोग अपने परिवार की सुख शान्ति की कामना करते हैं और यह भी चाहते हैं कि मेरे परिवार की परम्परा आगे बढ़ती रहे। इसी के संदर्भ में वेद का यह मंत्र हमें कितना अच्छा संदेश देता है कि पुत्र पिता के अनुव्रती हो, माता के अन्दर ममता भरा स्नेह हो और पति–पत्नी में मधुरता का संचार हो।

अब यहाँ प्रश्न यह कि पुत्र को पिता का अनुव्रतन करने का जो प्रयत्न किया गया है वह कैसे हो इसे वेद मंत्र के माध्यम से बताने का प्रयास किया गया है कि पिता के जो गुण हैं और वैदिक संस्कृति की जो परम्परा है उसका अनुव्रतन करो और उसके पीछे चलो। उदाहरण के रूप में आज्ञाकारी श्रीराम की कथा, श्रवण कुमार की कथा और जिन घरों में हिरण्यकश्यप की कथा नहीं है वहाँ भी किसी–न–किसी व्याज से संतान प्रहलाद का स्वाँग खेलने के लिए उत्सुक रहता है।

पर कुछ एसे भी लोग है जो शिक्षा को असामयिक और प्राचीन काल की दास का प्रतीक मानते हैं। पुत्र पिता की आज्ञा क्यों माने, क्योंकि आजकल के ग्रहीत और भावी विकास में यह बाधक है। पर मनुष्य यह नहीं समझता है कि कोढ़ी माँ–बाप भी अपने संतान को अपने से दूर रखते हैं कि कही कोढ़ की बीमारी मेरे संतान में न आ जाए। चोर–डाकू भी अपनी संतान को सही और उचित शिक्षा देने का प्रयत्न करते हैं। गुरूकुल में भी गुरू जब दिक्षातं ब्रहमचारी को दिक्षा देता है तो वह भी यही कहता है कि–

'यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि'।।

अर्थात् जो–जो हमारे धर्म युक्त कर्म हैं उन–उन का ग्रहण करो और जो–जो दुष्ट कर्म हो उनका त्याग कर दिया करो। अब प्रश्न है व्रत का, कैसा व्रत, किस प्रकार का व्रत? इसलिए बच्चों को यज्ञोपवित संस्कार में व्रत लेने को बड़े ही सुन्दर ढंग से कहा गया है कि–

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि।।

मैं व्रत लेता हूँ कि मैं असत्य का त्याग और सत्य को ग्रहण किया करूँगा। आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने सत्य के लिए अपने प्राणों की आहुती दे दी और यहाँ तक कि आर्यसमाज के नियमों में भी सत्य पर पूरा बल दिया गया है।

अब प्रश्न यह भी उठता है कि पुत्र किसे कहते हैं? पुत्र शब्द से बेटा–बेटी दोनों के अर्थ लिए जा सकते हैं। क्योंकि संस्कृत में पुत्र शब्द के अनेक पर्यायवाची हैं जैसे प्रजा, गयः, जाः, सूनुः आदि। यास्काचार्य ने निरूक्त में पुत्र शब्द की यह व्युत्पत्ति दी है पुत्+त्र। पुत् का नाम नरक के लिए है और त्र का मतलब रक्षा करने वाला। मनुस्मृतिमें कहा गया है कि–

पुंनाम्नो नरकाद् यस्मात् त्रायते पितरं सुतः।
तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा।।

पौराणिक मत के अनुसार नरक एक विशेष स्थान का नाम है जहाँ पापी लोग मरने के बाद जाते हैं और उनके पुत्र उनका श्राद्ध–तर्पण करके उन्हें स्वर्ग पहुँचाते हैं।

वैदिक संस्कृति का यह मानना है कि जो मनुष्य मर जाता है उसकी संस्कृति कभी नहीं मरती। इसलिए एक अच्छे पुत्र का कर्तव्य है कि वह कुलों की संतति, राज्यों की संतति और धन–सम्पति की संतति से कही मूल्यवाली संस्कृति की संतति को चीर स्थाई बनाने का प्रयत्न करें। एक अच्छे पुत्र के लिए यही पिता का अनुव्रत है।

'मात्रा संमनाः' माता के साथ समान मन वाला होना चाहिए। क्योंकि माँ की ममता सदैव अपने बच्चों के प्रति हिलोरे मारती रहती है इसलिए कहा गया है–

'कुपत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति'।

अर्थात् पुत्र कुपुत्र हो जाते हैं पर माता कभी भी कुमाता नहीं होती। वह अपने बच्चों को श्रद्धा, भक्ति, स्नेह और ममता के साथ–साथ सही शिक्षा देने का प्रयास करती है।

मंत्र के तीसरे चरण में पत्नी और पति के मधुर वाणी का वर्णन करते हुए कहा गया है कि पत्नी कभी भी कर्कश स्वभाव की नहीं होनी चाहिए। क्योंकि हर गृहिणी अपने परिवार में एक नए जीवन का उद्देश्य बनाये रखती है। यदि पति कर्कश स्वभाव का हो तो उसे भी संभाल कर साथ ले चलने का कर्तव्य उसकी पत्नी का ही होता है। देखा जाए तो हमारे शरीर में केवल मॉस पेशियाँ ही नहीं होती उनके साथ हड्डियाँ भी जुड़ी हुई हैं जो हमारे शरीर को चलाने में सहायता देती हैं। ठीक उसी प्रकार परिवार को चलाने के लिए पति–पत्नी दोनों के पूर्ण सहयोग की आवश्यकता है। इसलिए विवाह संस्कार के मधुपर्क विधि में यह मंत्र बुलवाया जाता है–

मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः।।

ओम् शम् धन्यवाद

अरविन्द गुप्ता डी. ए. वी. स्कूल

☞ *पृष्ठ 08 का शेष*

पुनर्जन्म (आवागमन)

होगी, हारने का भय होगा नाना प्रकार की शंकाएँ होंगी। किन्तु उसको पालकी में ले जा रहे कहार को सुन्दर कोमल बिछौने पर सोता है पर उसको शीघ्र नींद नहीं आती। पर मजदूर कंकड, पत्थर, मिट्टी पर सोते ही तुरन्त निद्रा के वशीभूत हो जाता है। ऐसे ही सभी जगह समझना चाहिए।

उत्तर– यह समझ अविद्वानों की है। यदि सभी का सुख–दुःख और साहूकार तथा कहार का सुख–दुःख बराबर है तो कहार क्यों साहूकार बनना चाहते हैं किन्तु साहूकार कभी कहार बनना नहीं चाहता। संसार में सभी जीवों में उच्चावच्च स्थिति है वैषम्य है, इससे इन्कार नहीं होना चाहिए। एक जीव विद्वान् बनता है। दूसरा पढ़ाने पर भी कुछ नहीं पढ़ पाता, मूर्ख रह जाता है। यह स्थिति एक ही माता–पिता के पुत्रों में होती है। एक राजा के घर जन्म लेता है। जन्म लेते ही सम्पूर्ण उत्तम व्यवस्था खान–पान, रहन–सहन की होती है। दूसरा महादरिद्र घसियारे के यहाँ जन्म लेकर दूध के लिए भी तरस जाता है। अभावों और कष्टों में जीता है, पलता है और लाख पुरूषार्थ करने पर सफल नहीं हो पाता, अभावों में ही मर जाता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि जीव बिना पूर्वजन्म के पाप–पुण्य के इस उस मुकद्दमों के संबंध में कोई चिन्ता नहीं। इसी प्रकार राजा जन्म में विशेष सुख–दुःख प्राप्त नहीं कर सकता। अन्यथा परमेश्वर ही दोषी सिद्ध होगा।

पुर्नजन्म न मानने पर आपत्तियाँ– यदि बिना पूर्वजन्म के पाप–पुण्य के इस जन्म में सुख–दुःख मिलते हैं तो अगले जन्म के सुख के लिये कोई पुण्य करने की आवश्यकता नहीं है। जिसे स्वर्ग–नरक या जन्नत और दोज़ख कहा जाता है उसके लिए कोई पुरूषार्थ करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। क्योंकि परमात्मा जिसे चाहेगा स्वर्ग भेज देगा जिसे नरक भेजना चाहेगा उसे नरक भेज देगा। फिर जीव इस में धर्म या पुण्यादि का कार्य क्यों करे? क्योंकि धर्म का फल मिलने में सन्देह है। परमेश्वर के हाथ में ही सब कुछ है। यह मान्यता पापकर्मों में मनुष्य के भय को समाप्त कर देगी। तब पापकर्मों में भय न होने से संसार में पाप की वृद्धि तथा धर्म का क्षय हो जाएगा। इसलिए पूर्वजन्म के पुण्य–पाप के अनुसार वर्तमान जन्म, और वर्तमान तथा पूर्वजन्म के कर्मानुसार भविष्यत् के जन्म होते हैं, यही सिद्धान्त मनुष्यों के लिए हितकर तथा लाभप्रद है।

विशेष– यह महत्त्वपूर्ण बात है कि यद्यपि कतिपय दर्शनों ने एक दूसरे के सिद्धान्तों की कड़ी आलोचनाएँ की है। किन्तु चार्वाक को छोड़कर सभी भारतीय दर्शनों (जैन, बौद्ध तथा आस्तिक षड्दर्शनों) ने कर्म एवं पुनर्जन्म के सिद्धान्त को एक स्वर से स्वीकार किया है।

अतः 'धर्म और अधर्म' (पुण्य और पाप) के द्वारा वशीकृत जीव अनेकानेक योनियों में संसरण करता रहता है– "धर्माधर्म–वशीकृतो जीवस्तासु तासु योनिषु संसरति।"

भूत–प्रेत

प्रेत– मृतक शरीर का नाम **प्रेत** है। क्योंकि मृतक शरीर के उठानेवाले को **प्रेतहार** कहते हैं। इस सम्बन्ध में मनुस्मृति का प्रमाण है–

गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृमेधं समाचरन्।
प्रेतहारैः समं तत्र दशरात्रेण शुध्यति।।

–(मनु. 5/56)

भूत– शरीर का दाह हो जाने के बाद उसका नाम भूत होता है। अर्थात् अमुक नाम का वह व्यक्ति था। अर्थात् जो उत्पन्न होकर वर्तमान में आकर फिर न रहे अर्थात् भूतकाल में स्थित हो जाए।

मिथ्या भ्रान्ति से अर्थात् अविद्या, भ्रम, कुसंस्कार तथा कुशिक्षा के कारण लोग उन्मादादि का नाम **भूत–प्रेत** समझते हैं।

एसोसियेट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
संस्कृत विभाग
रणवीर रणञ्जय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,अमेठी

hearyasamaj.org

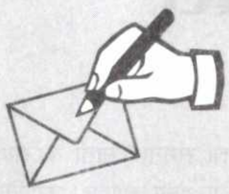

पत्र/कविता

हिन्दुत्व मजबूत हुआ, आर्यत्व कब होगा?

कलयुग में संगठन में शक्ति यह कहा जाता है और लोकतंत्र के लिए यह आवश्यक भी है। हिन्दू समाज के विघटन दोष के कारण काँग्रेस साठ सालों से सत्ता पर काबिज रही थी, और बहुसंख्य समाज गांधी नेहरू परिवार के अलावा कुछ सोच भी नहीं सकता था, लेकिन 2014 के चुनाव से यह बात तो साबित हो गयी कि सारी बातें यदि जुड़कर आ जाती हैं तो देश की दिशा बदल सकती है।

आर्यसमाजियों का यह मानना कि हिन्दू समाज कभी संगठित नहीं हो सकता, क्योंकि वह देवी देवताओं, आस्थाओं, मत–मतांतरों में बिखरा हुआ असंगठित समाज है, गलत सिद्ध हुआ। विकास की और अच्छे दिनों की ऐसी बीन बजाई कि सम्पूर्ण हिंदूसमाज संगठित हो गया और 60 सालों से सत्ता पर आसीन काँग्रेस को सिंहासन से उतार कर जमीन पर लाकर खड़ा कर दिया।

आर्यसमाज की इस चुनाव में कोई बड़ी भूमिका नहीं रही। लेकिन अन्य सभी सामाजिक संगठनों, हिन्दूवादी संस्थाओं का इस चुनाव में भारी योगदान दिखाई दिया। स्वयं स्वामी रामदेव ने अपने हजारों कार्यकर्ताओं को साथ लेकर भाजपा को चुनाव जिताने में सहयोग किया। हाँ, इतना जरूर था कि व्यक्तिगत रूप से अथवा अन्य हिन्दूवादी संगठनों के साथ मिलकर आर्यों ने भाजपा को जिताने में सहयोग दिया हो लेकिन संस्थागत रूप से आर्यसमाज इस चुनाव में अलिप्त रहा।

प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या आर्यसमाज इस तरह के राष्ट्रीय एवं सामाजिक कार्यों के प्रति कब तक उदासीन बनकर रहेगा या स्वयं को अलिप्त रखेगा?

हिंदू समाज भले ही सामाजिक तौर पर बिखरा हुआ हो लेकिन उसने एक–जुट एवं मजबूत होकर भाजपा की झोली में अभूतपूर्व मतदान किया।

परिणाम यह हुआ कि सदा सर्वदा सत्ता में रही काँग्रेस पार्टी केवल 44 सीटों पर सिमट कर रह गयी। उसको संसदीय विरोधी पार्टी नेता का पद भी हासिल न हो सका इस तरह हिन्दुत्व संगठित एवं मजबूत होकर भारतीय राजनीति में उभर कर आया। आर्य कार्यकर्ताओं, समाजसेवियों, पदाधिकारियों और आर्यसमाजियों को समझ लेना होगा कि जो जिसकी उपेक्षा करता है, वह (समाज) उसे हाशिए पर डाल देता है। अतः धर्म, अध्यात्म, शास्त्र, उपासना आदि का प्रचार करते हुए भी राष्ट्रीय सामाजिक आन्दोलनों में बढ़–चढ़कर हिस्सा लेना अपरिहार्य है, अन्यथा प्रवाह से बाहर फेंक दिये जाओगे यह संदेश इस चुनाव के माध्यम से जनता ने आर्यसमाज को दिया है। महाराष्ट्र के आध्यात्मिक गुरु समर्थ रामदास ने मुगलों के विरुद्ध महाराष्ट्र के वीर शिरोमणि शिवाजी और मराठा लड़ाऊ क़ौम को अपनी प्रखर वाणी से जागृत और संगठित कर औरंगजेब को दक्षिण में पांव रखने नहीं दिये थे। इस बात को फिर से स्मरण करना मात्र उद्देश्य।

प्रा. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे
सीताराम नगर, लातूर
पिन कोड–412531 (महाराष्ट्र)

****

काल्पिनिक धूर्तों को भी हराना होगा

चूँकि आज वेदों पर सैद्धान्तिक सर्वाधिकर आर्य समाज के ही पास है एवं होना भी चाहिये, इसी लिये यह निवेदन (लेख) आप को ही भेजा जा रहा है।

साईं मुद्दे पर शंकराचार्य शांत पड़ गये, क्योंकि उनके पास ही अनेक पाखंड भरे पड़े हैं। वे साईं को हिंदुओं के पूजा घरों से हटाना चाहते हैं तो निर्मल बाबा, संतोषीमाता, राधा जैसे काल्पनिक एवं धूर्तों को भी हटवाना होगा। जो किसी कांग्रेसी शंकराचार्य से इस जन्म में हो नहीं सकता। स्वामी रामदेव सरीखे आर्य–संत ही आगे आकर 'महर्षि दयानंद के सपनों का भारत बनाकर आर्यो के पतन को रोककर आर्यसमाज को पुनः जीवन्त कर सकते हैं।

आर्य प्रहलाद गिरि
9735132360

****

श्रीराम एवं राम सेतु

श्रीराम के अस्तित्व का जो माँग रहें हैं वैज्ञानिक प्रमाण।
ईसा की जन्म–कथा पर क्यों मौन है उनका विज्ञान।।
पुरुष के संयोग बिना नारी कर सकती है पैदा संतान।
क्या इसकी पुष्टि कर सकता है, पाश्चात्यय विज्ञान।।

यदि नहीं तो ईसा मसीह स्वतः सिद्ध हैं कल्पना की उड़ान।
इस नाम से विश्व–काल–गणना क्यों करता है विज्ञान।।
काल्पित नाम पर इतिहास–लेखन, है विज्ञान का पाखंड।
क्यों अपनाते हैं वे राम –ईशा पर अलग–अलग मानदंड।।

छोड़कर इस इतिहास को, देखें हम नव–विज्ञान से।
रामसेतु दक्षिणी तटों का रक्षक–सुनामी के तूफान से।।
रामसेतु को तोड़ना बुद्धिमानी नहीं, केवल नादानी है।
तटीय क्षेत्रों का कवच भी, नहीं सिर्फ राम की निशानी है।।

सेतु–क्षेत्र में थोरियम तत्त्व का एक सुरक्षित भंडार है।
देश के परमाणु कार्यक्रम का, जो एक सुदृढ़ आधार है।।
नौपरिवहन से जब यह थोरियम नष्ट हो जाएगा।
दूसरे देशों के सामने, तब भारत निज हाथ फैलाएगा।।

नौ परिवहन से मरेंगी मछलियाँ, नष्ट होंगे शैवाल भी।
नष्ट होगी आजीविका, भूख से होंगे लोग बेहाल भी।।
रामसेतु–भंजन न देश, न जनहित के अनुकूल है।
परिस्थितिकी तंत्र की दृष्टि से कार्य यह प्रतिकूल है।।

राम सेतु भारत–लंका को जोड़ने का न केवल सेतु है।
उत्तर एवं दक्षिण भारत की एकता का भी यह हेतु है।।
राष्ट्रीय एकता से बड़ा मानकर, इस आर्थिक व्यापार को।
क्या तोड़ना उचित है, राष्ट्रीय एकता के इस आधार को।।

अदृश्य नूह की किश्ती पर पश्चिम कर रहा अनुसंधान है।
प्रत्यक्ष रामसेतु पर यहाँ हो रहा भंजक शर–संधान है।।
विमान, सेतुबंधन, हमारी पुरातन उच्च तकनीक है।
अपने ही हाथों उसे नष्ट करना जरा सोचिए क्या ठीक है।।

कैसे भारतीय हैं, तोड़ रहे हैं हम, अपने सेतु प्राचीन को।
आँखें तो हैं, पर देखते नहीं हैं, हम अपने पड़ोसी चीन को।।
समुद्र पर पुल बाँध, फहरा रहा निज तकनीकी ध्वज को।
निज धरोहर को हम तोड़ रहे, धिक् इस अनार्य समझ को।।

यदि मान लें कि यह सेतु मानवीय नहीं, प्राकृतिक निर्माण है।
तो भी इसकी सर्वविधि रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य महान है।।
जग का कल्याण अन्तर्निहित होता है हर प्राकृतिक निर्माण में।
हम रक्षक न बन, बाधक क्यों बनें, प्रकृति के रक्षा–विधान में।।

गौरवशाली अतीत को नकारने वाले तो कल्पित कहेंगे ही।
इसे तोड़ने मिटाने के पक्ष में, ये हठधर्मी सदा रहेंगे ही।।
पर जिनको देश के गौरवमय अतीत पर अभिमान है।
वे तो इसकी रक्षा में दे सकते अपना सर्वस्व बलिदान हैं।।

अपनाकर राम के चरित्र को हम श्रीराम का सुभक्त बनें।
छोड़कर आत्मघाती कायरता हम सबल वीर सशक्त बनें।।
निकालें अग्निबाण और हठधर्मियों पर शर–संधान करें।
ताकि वे सिन्धुवत् रामसेतु की रक्षा का स्वयं ही विधान करें।।

सूर्य देव चौधरी
स्वामी श्रद्धानन्द पथ, रांची
मो. 09470587322

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 7 का शेष

एक क्रान्तिकारी की जेल...

चालों को जानते हुए भी मैंने सब कार्य उसकी लम्बी बातों की पोल खोलने के लिए ही किये। काकोरी के मृत्युदण्ड प्राप्त करने वालों–प्रार्थना न स्वीकार करने का कोई विशेष कारण सरकार के पास नहीं। सरकार ने बंगाल आर्डिनेन्स के कैदियों के सम्बन्ध में जो कुछ कहा था सो काकोरी वालों ने किया। मृत्युदण्ड को रद्द कर देने से देश में किसी प्रकार की शान्ति भंग होने या किसी विप्लब हो जाने की संभावना नहीं थीं। विशेषतया जब कि देश भर के सब प्रकार के हिन्दू मुसलमान असेम्बली के सदस्यों ने इसकी सिफारिश की थी। षड्यंत्रकारियों की इतनी बड़ी सिफारिश इससे पहले कभी नहीं हुई थी। किन्तु सरकार तो अपना पासा सीधा रखना चाहती है। उसे अपने बल पर विश्वास है। सर विलियम मेरिस ने ही स्वयं शाहजहाँ पुर तथा इलाहाबाद के हिन्दू मुस्लिम दंगे के अभियुक्तों के मृत्यु दण्ड रद्द किये हैं। जिनको कि इलाहाबाद हाईकोर्ट से मृत्युदण्ड ही देना उचित समझा गया था, और उन लोगों पर दिन दहाड़े हत्या करने के सीधे सबूत मौजूद थे। ये सजायें ऐसे समय माफ की गई थीं, जब कि नित्य हिन्दू–मुस्लिम दंगे बढ़ते ही जाते थे। यदि काकोरी के कैदियों को मृत्युदण्ड माफ करके दूसरी सजा देने से दूसरों का उत्साह बढ़ता तो क्या इसी प्रकार मजहबी दंगों के सम्बन्ध में भी यह नहीं हो सकता था?

मैं प्राण त्यागते समय निराश नहीं हूँ, कि हम लोगों के बलिदान व्यर्थ गये। मेरा तो विश्वास है कि हम लोगों की छिपी हुई आहों का ही यह नतीजा हुआ कि लॉर्ड बर्कनहेड के दिमाग में परमात्मा ने एक विचार उपस्थित किया कि हिन्दुस्तान के हिन्दू–मुस्लिम झगड़ों का लाभ उठाओ और भारत वर्ष में (गुलामी की) जंजीरों को और अधिक कस दो। 'गये थे नमाज बख़्शवाने रोजे गले पड़ गये।' भारतवर्ष के प्रत्येक विख्यात राजनैतिक दल ने और हिन्दुओं के तो लगभग सभी तथा मुसलमानों के भी अधिकतर नेताओं ने एक स्वर से रायल कमीशन की नियुक्ति ताकि उसके सदस्यों के विरूद्ध घोर विरोध किया है, और अगली कांग्रेस (मद्रास) पर सब राजनैतिक–दलों के नेता तथा हिन्दू–मुसलमान एक होने जा रहे हैं। वाइसराय ने जब हमें काकोरी के मृत्यु दण्ड वालों की दया प्रार्थना अस्वीकार की थी, उसी समय मैंनें श्री मोहन लाल जी को पत्र लिखा था कि हिन्दुस्तानी नेताओं को तथा हिन्दू–मुसलमानों को अगली कांग्रेस पर एकत्रित हो हम लोगों की याद मनानी चाहिए।

ब्रिटिश सरकार ने अशफाकउल्ला को रामप्रसाद (विस्मिल) का दाहिना हाथ करार दिया। अशफाकउल्ल कट्टर मुसलमान होकर पक्के आर्य समाजी रामप्रसाद का क्रान्तिकारी दल के सम्बन्ध में दाहिना हाथ बन सकते हैं, तब क्या भारतवर्ष की स्वतंत्रता के नाम पर हिन्दू–मुसलमान अपने निजी छोटे–छोटे फायदों का ख्याल न करके आपस में एक नहीं हो सकते!

परमात्मा ने मेरी पुकार सुन ली, और मेरी इच्छा पूरी होती दिखाई देती है। मैं तो अपना कार्य कर चुका। मैंने मुसलमानों में से एक नवयुवक निकाल कर भारतवासियों को दिखला दिया, जो सब परीक्षाओं में पूर्णतथा उर्त्तीर्ण हुआ। अब किसी को यह कहने का साहस न होना चाहिए कि मुसलमानों पर विश्वास न करना चाहिए। यह पहला तजुर्बा था जो पूरी तौर से कामयाब हुआ। अब तो देश वासियों से यही प्रार्थना है कि यदि वे हम लोगों के फाँसी पर चढ़ने से जरा भी दुखित हुए हों तो उन्हें यही शिक्षा लेनी चाहिए कि हिन्दू मुसलमान तथा सब राजनैतिक दल एक होकर काँग्रेस को अपना प्रतिनिधि मानें।

हिन्दू मुस्लिम एकता ही हम लोगों की यादगार तथा अंतिम इच्छा हैं। चाहे वह कितनी ही कठिनाई से क्यों न प्राप्त हो। जो मैं कह रहा हूँ वहीं श्री अशफाकउल्ला खाँ का भी मत है, क्योंकि अपील के समय हम दोनों लखनऊ जेल में फाँसी की कोठरियों में आमने सामने कई दिन तक रहे थे। आपस में हर तरफ की बातें हुई थीं। गिरफ्तारी के बाद से हम लोगों की सजा बढ़ने तक श्री अशफाकउल्ला खाँ की बड़ी भारी उत्कट इच्छा थी कि वह एक बार मुझ से मिल लेते, जो परमात्मा ने पूरी कर दी। (क्रान्तिकारी का सम्भवतः यह तात्पर्य है कि दोनों का मिलन परलोक में तो हो ही जायेगा।)

श्री अशफाकउल्ला खाँ तो अंग्रेजी सरकार से दया–प्रार्थना करने पर राजी ही न थे। उनका तो अटल विश्वास यही था कि खुदावन्द करीम के अलावा किसी दूसरे से दया की प्रार्थना न करनी चाहिए। परन्तु मेरे विशेष आग्रह से ही उन्होंने सरकार से दया–प्रार्थना की थीं। इसका दोषी मैं ही हूँ। जो मैंने अपने प्रेम के पवित्र अधिकारों का उपयोग करके श्री अशफाकउल्ला खाँ को उनके दृढ़ निश्चय से विचलित किया। मैंने एक पत्र द्वारा अपनी भूल स्वीकार करते हुए भ्रातृ द्वितीया (भैया दूज) के अवसर पर गोरखपुर जेल से श्री अशफाक को पत्र लिखकर क्षमा प्रार्थना की थीं। परमात्मा जाने कि वह पत्र उनके हाथों तक पहुँचा भी या नहीं? खैर, परमात्मा की ऐसी ही इच्छा थी, कि हम लोगों को फाँसी दी जाय, भारतवासियों के जले हुए दिलों पर नमक पड़े। वे बिलबिला उठें और हमारी आत्मायें उनके कार्यों को देखकर सुखी हों। जब हम नवीन शरीर धारण करके देश सेवा में योग देने को उद्यत हों।

प्री.वी. कौंसिल में अपील भिजवाकर मैंने जो व्यर्थ का अपव्यय करवाया, उसका भी एक विशेष अर्थ था। सब अपीलों का तात्पर्य यह था कि मृत्युदण्ड उपयुक्त दण्ड नहीं। क्योंकि न जाने किसकी गोली से आदमी मारा गया। अगर डकैती डालने की जिम्मेदारी के ख़्याल से मृत्युदण्ड दिया गया तो चीफकोर्ट के फैसले के अनुसार भी मैं ही डकैतियों का जिम्मेदार तथा नेता था, और प्रान्त का नेता भी मैं ही था। अतएव मृत्युदण्ड तो अकेला ही मुझे ही मिलना चाहिए था। अन्य तीन को फाँसी नहीं देनी चाहिए थीं। इनके अतिरिक्त दूसरी सब सजायें स्वीकार होतीं। पर ऐसा क्यों होने लगा? मैं विलायती न्यायालय की भी परीक्षा करके स्वदेश वासियों के लिए उदाहरण छोड़ना चाहता था, कि यदि कोई राजनैतिक अभियोग चले तो वे कभी भूलकर भी किसी अंग्रेजी अदालत का विश्वास न करें। तबियत हो तो जोरदार बयान दें। अन्यथा मेरी तो यही राय है कि अंग्रेजी अदालत के सामने न तो कभी कोई बयान दें और न कोई सफाई पेश करें। काकोरी षड्यंत्र के अभियोग से शिक्षा प्राप्त कर लें। इस अभियोग में सब प्रकार के उदाहरण मौजूद हैं।

प्री.वी. कौंसिल में अपील दाखिल करने का एक विशेष अर्थ यह भी था, कि मैं कुछ समय तक फाँसी की तारीख टलवा कर यह परीक्षा करना चाहता था, कि नवयुवकों में कितना दम है और देशवासी कितनी सहायता दे सकते हैं। इस कार्य में मुझे बड़ी निराश पूर्ण असफलता हुई। अन्त में मैंने निश्चिय किया था कि यदि हो सके तो जेल से निकल भागूँ। ऐसा हो जाने से सरकार को अन्य तीनों फाँसी वालों की सजा माफकर देनी पड़ेगी, और यदि न करते तो मैं करा लेता।

मैंने जेल से भागने के अनेक प्रयत्न किये, किन्तु बाहर से कोई सहायता न मिल सकी। यहीं तो हृदय पर आघात लगता है, कि जिस देश में मैने इतना बड़ा क्रान्तिकारी आन्दोलन तथा षड्यंत्रकारी दल खड़ा किया था, वहाँ से मुझे प्राण रक्षा के लिए एक रिवाल्वर तक न मिल सका। एक नवयुवक भी सहायता को न आ सका। अन्त में फाँसी पा रहा हूँ फाँसी पाने का मुझे भी शोक नहीं क्योंकि मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि परमात्मा को यहीं मंजूर था। मगर मैं नवयुवकों से फिर नम्र निवेदन करता हूँ कि जब तक भारतवासियों की अधिक संख्या सुशिक्षित न हो जाय, जब तक उन्हें कर्तव्य– अकर्तव्य का ज्ञान न हो जाय, तब तक वे भूलकर भी किसी प्रकार के क्रान्तिकारी षड्यंत्रों में भाग न लें। यदि देश सेवा की इच्छा हो तो खुले आन्दोलनों द्वारा यथा–शक्ति कार्य करें। अन्यथा उनका बलिदान उपयोगी न होगा। दूसरे प्रकार से इससे अधिक देश–सेवा हो सकती है, जो ज्यादा उपयोगी सिद्ध होगी। परिस्थिति अनुकूल न होने से ऐसे आन्दोलनों में परिश्रम प्रायः व्यर्थ जाता है। जिनकी भलाई के लिए करो वे ही बुरे–बुरे नाम धरते हैं, और अन्त में मन ही मन कुढ़–कुढ़ कर प्राण त्यागने पड़ते हैं।

देश वासियों से यही अन्तिम विनय है, कि जो कुछ करें सब मिलकर करें, और सब कुछ देश की भलाई के लिए करें। इसी से सबका भला होगा।

'मरते 'बिस्मिल' 'रोशन' 'लहरी' 'अशफाक' अत्याचार से।
होंगे पैदा सैकड़ों इनके रूधिर की धार से।।

24/4 विशन सरूप
कॉलोनी–पानीपत–132103
दूरभाष–0180/2643700
मो.–08053123781

बहादुरगढ़ में होगा ऋग्वेदीय बृहद् यज्ञ एवं निःशुल्क ध्यान योग शिविर

आत्मशुद्धि आश्रम बहादुरगढ़ के मन्त्री श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री से प्राप्त विज्ञप्ति के अनुसार आत्मशुद्धि आश्रम, बहादुरगढ़ के 48वें स्थापना दिवस एवं वार्षिकोत्सव पर ऋग्वेदीय बृहद् यज्ञ एवं निःशुल्क ध्यान योग शिविर का आयोजन 26 सितम्बर से 2 अक्टुबर 2014 तक पूज्य स्वामी धर्ममुनि जी दुग्धाहारी मुख्याधिष्ठाता के सानिध्य में आयोजित किया जा जा रहा है। इस कार्यक्रम में आर्य समाज के प्रसिद्ध वैदिक विद्वानों के प्रवचन एवं भजन होंगे। आर्य जनों से निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में पधारकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ायें।

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 10-11/9/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अबोहर के प्रांगण में यज्ञशाला के शिलान्यास पर भूमि-पूजन

डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति, नई दिल्ली के आह्वान पर डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अबोहर के प्रांगण में पिछले दिनों यज्ञशाला निर्माण हेतु भूमि–पूजन किया गय, जिसमें सर्वप्रथम वैदिक रीति से मंत्रोच्चारण करके शिलान्यास किया गया। इस अवसर पर स्थानीय समिति के वरिष्ठ सदस्य श्री देव मित्र जी आहूजा, आर्य समाज अबोहर के प्रधान श्री सोहन लाल जी सेतिया, श्री बी.एल सिक्का जी, डॉ. सुशील रतन मिगलानी, डॉ. (श्रीमती) सरोज मिगलानी, डी.ए.वी. सीनियर सैकेण्डरी स्कूल के प्रिंसीपल श्रीमती कुसुम खुंगर, महाविद्यालय की प्राचार्य डॉ. (श्रीमती) विनीता सिंह, समूह–स्आफ, बी.एड.व ई.टी.टी. के विद्यार्थी थे।

ईंटों को अच्छी तरह से धोकर, विभिन्न अतिथिगणों, प्राचार्या महोदया स्टाफ (शिक्षक वर्ग तथा गैर शिक्षक वर्ग) तथा विद्यार्थियों से नींव में रखवाया गया। साथ–साथ मन्त्रोच्चारण होता रहा। इससे पहले भी महाविद्यालय में हवन यज्ञ प्रत्येक वीरवार को विशाल कक्ष में करवाया जाता है। काफी समय से यज्ञशाला की आवश्यकता महसूस की जा रही थी, जो अब कुछ महीनों में बनकर तैयार हो जाएगी तथा विद्यार्थी यज्ञशाला में बैठकर हवन कर सकेंगे। गौरतलब है कि यह यज्ञशाला विद्यार्थियों व समूह–स्टाफ के स्वैच्छिक वित्तीय सहयोग से निर्मित की जा रही है।

बी. आर. डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बेगूसराय, बिहार में संस्कृत सप्ताह

बी. आर. डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल (अंग्रेजी एवं हिंदी माध्यम) आइ.ओ.सी. बेगूसराय, बिहार में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली के निर्देशानुसार 07 अगस्त से 13 अगस्त 2014 तक संस्कृत सप्ताह आयोजित किया गया। प्राचार्य सुश्री अंजलि के मार्गदर्शन में संस्कृत शिक्षकों तथा विद्यार्थियों ने विभिन्न सांस्कृतिक एवं साहित्यिक कार्यक्रमों के माध्यम से उक्त अवधि में विद्यालय के सम्पूर्ण माहौल को संस्कृतमय बना दिया। इसकी शुरूआत वैदिक ऋचाओं की पावन ध्वनि तथा वैदिक हवन के साथ हुई। इसके अन्तर्गत भाषण प्रतियोगिता, श्लोक वाचन प्रतियोगिता, संस्कृत गीत, भजन, नृतय, संस्कृत लघुनाटिका तथा प्रहसन का मंचन, सुविचार, समाचार वाचन, संस्कृत–संलाप जैसे अनेक ज्ञानवर्धक तथा मनोरंजक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य विद्यालय के शिक्षार्थियों में संस्कृत भाषा एवं साहित्य के प्रति अभिरूचि तथा उनमें रचनात्मकता, नैतिकता, मानवता–जैसे गुणों की वृद्धि करना था। भाषण प्रतियोगिता का विषय– 'संस्कृत भाषायाः महत्वम्' था। इसमें विष्णु प्रिया नवमी, प्राची झा दशमी ने प्रथम, उत्कर्ष एवं इशिता दशमी ने द्वितीय तथा प्रज्ञा भारद्वाज दशमी ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। श्लोक वाचन में स्वाति दशमी, विशाल राजा दशमी, तथा तनुप्रिया नौवीं ने क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया। संस्कृत सप्ताह के समापन समारोह में विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए प्राचार्या सुश्री अंजति ने संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार पर बल दिया। विद्यार्थियों को दैनिक जीवन में संस्कृत भाषा के अधिकाधिक प्रयोग करने की सलाह दी। संस्कृत शिक्षक डॉ. यू. गिरि, श्री उदय कुमार मिश्र, श्रीमती ताप्ती सिंह तथा श्रीमती मुक्ता भारद्वाज की भूमिका सराहनीय रही। संस्कृत विभागाध्यक्ष तथा उक्त कार्यक्रमों के संयोजक श्री वीरेन्द्र कुमार सिंह ने धन्यवाद ज्ञापन किया। शांति पाठ के साथ समारोह संपन्न हुआ।

प्रो. (डॉ.) शशिप्रभा कुमार को मिला राष्ट्रपति सम्मान

स्वाधीनता दिवस के अवसर पर प्रतिवर्ष देश और विदेश के विभिन्न विद्वानों, जिन्होंने संस्कृत, पर्शियन, अरेबिक और पाली तथा प्राकृत भाषाओं में मौलिक शोध किया हो, को देश के राष्ट्रपति द्वारा एक सम्मान–पत्र प्रदान किया जाता है। इस वर्ष प्रो. शशिप्रभा कुमार, उप–कुलपति द्वारा एक सम्मान–पत्र प्रदान किया जाता है। इस वर्ष प्रो. शशिप्रभा कुमार, उप–कुलपति, Sanchi University of Buddhist-Indic Studies, भोपाल, मध्यप्रदेश को संस्कृत में उनके उच्च–स्तरीय कार्य के लिए सम्मानित किया गया है। प्रो. शशिप्रभा कुमार इससे पहले जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग की अध्यक्ष एवं दिल्ली संस्कृत अकादमी की अध्यक्ष रहे चुकी हैं। डॉ. कुमार एक आर्यसमाज परिवार से संबंध रखती हैं और ऋषि दयानन्द के विचारों का गंभीरता से अनुसरण करते हुए देश विदेश में इसका प्रचार–प्रसार भी करती हैं।

'आर्य जगत्' परिवार प्रो. शशिप्रभा कुमार को इस राष्ट्रपति सम्मान के लिए बधाई देते हुए उनके स्वस्थ, सक्रिय और सफल दीर्घ–जीवन की कामना करता है।

आर्य पुरोहित सभा मुम्बई का निर्वाचन संपन्न

आर्य पुरोहित सभा, मुम्बई की साधारण सभा आर्य समाज सान्तक्रुज के प्रथम तल पर संपन्न हुई, जिसमें वर्ष 2014–2015 के लिए निर्वाचन हुआ। सभा के नव निर्वाचित पदाधिकारी हैं **प्रधान**–प. नामदेव आर्य, **उपप्रधान**–पं. धर्मधर आर्य, **मन्त्री**–श्री नरेन्द्र शास्त्री, **कोषाध्यक्ष**–श्री विनोद कुमार शास्त्री स्वागत एवं बधाई – डॉ. सोमदेव शास्त्री जी को आर्य प्रतिनिधि सभा अमेरिका द्वारा समायोजित आर्य महासम्मेलन में भाग लेने हेतु निमन्त्रण पर आर्य पुरोहित सभा, मुम्बई के सभी सदस्यों ने मन्त्र पाठ कर बधाई दी। नरेन्द्र शास्त्री के द्वारा सभी नवनिर्वाचित पदाधिकारियों को बधाई दी गयी तथा सभी सदस्यों को धन्यवाद दे कर शान्तिपाठ के साथ बैठकर संपन्न की गयी।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**